रावण-शिव संवादरूप

उड्डीशतन्त्रम्

रावण-प्रणीत षट्कर्म, इन्द्रजाल, यक्षिणी एवं
योगिनी-सिद्धि का प्रामाणिक दुर्लभ ग्रन्थ



सम्पादक एवं टीकाकार
डॉ० शशिशेखर चतुर्वेदी

आमुख
आचार्य राधेश्याम चतुर्वेदी

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
651



रावण-शिव संवादरूप

उड्डीशतन्त्रम्

रावण-प्रणीत षट्कर्म, इन्द्रजाल, यक्षिणी एवं योगिनी-सिद्धि का प्रामाणिक दुर्लभ ग्रन्थ

हिन्दीटीका सहित

सम्पादक एवं टीकाकार
डॉ. शशिशेखर चतुर्वेदी
एम.ए. पी एच.डी, साहित्याचार्य
प्राचार्य, श्रीनन्दलाल बाजोरिया संस्कृत महाविद्यालय
अस्सी, वाराणसी-221005

आमुख
आचार्य राधेश्याम चतुर्वेदी



चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

उड्डीशतन्त्रम्

पृष्ठ : 14+111

ISBN : 978-93-86554-96-3

प्रकाशक

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)

के. 37/117 गोपालमन्दिर लेन

पो. बा. नं. 1129, वाराणसी 221001

दूरभाष : +91 542-2335263; 2335264

email : chaukhambasurbharatiprakashan@gmail.com

website : www.chaukhamba.co.in

प्रथम संस्करण 2019 ई०

मूल्य : ₹ 90.00

अन्य प्राप्तिस्थान

चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस

4697/2, भू-तल (ग्राउण्ड फ्लोर)

गली नं. 21-ए, अंसारी रोड

दरियागंज, नई दिल्ली 110002

दूरभाष : +91 11-23286537

email : chaukhambapublishinghouse@gmail.com

●

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

38 यू. ए. बंगलो रोड, जवाहर नगर

पो. बा. नं. 2113, दिल्ली 110007

●

चौखम्बा विद्याभवन

चौक (बैंक ऑफ बड़ौदा भवन के पीछे)

पो. बा. नं. 1069, वाराणसी 221001

आमुख

अतीव प्रसन्नता का विषय है कि उड्डीश तन्त्र का नूतन संस्करण हिन्दी व्याख्या के साथ प्रकाश में आया है। तन्त्र अथवा आगम एवं निगम की दो धारायें अनादिकाल से इस भारत वसुन्धरा पर निरन्तर प्रवाहित होती चली आ रही हैं। शिवमुखोद्गत तन्त्रशास्त्र का स्वतः प्रामाण्य है। 'तत्रि' बन्धने अथवा 'तनु' विस्तारे धातु से निष्पन्न तन्त्र शब्द बन्ध और मोक्ष दोनों का द्योतक है। पारमार्थिक दृष्टि से परम सत्ता अपनी इच्छा से अपने को बन्धन में डालती है और फिर नाना उपायों से स्वयं के द्वारा स्वयं को मुक्त करती है। यही उस परम सत्ता का स्वातन्त्र्य है। प्रत्यभिज्ञाहृदय का प्रथम-द्वितीय सूत्र—चितिः स्वतन्त्रा विश्वसिद्धिहेतुः (१), सा स्वेच्छया स्वभित्तौ विश्वमुन्मीलयति (२)—इसी तथ्य के उद्घाटक हैं। यह विश्व उसी एक चित्सत्ता का लीला विलास है। इस नाटक के रङ्गमञ्च, अभिनयकर्त्ता वही परमात्मा हैं और अपने द्वारा किये जा रहे अभिनय के दर्शक भी वही हैं। साथ ही वे विश्व से परे शान्त केवली रूप में भी विराजमान हैं। जब वे लीलामय पुरुष का रूप धारण करते हैं, तब वे स्वयं विश्वमय होते हैं। इसी समय वे विश्व से परे विश्वोत्तीर्ण रूप में विराजते हैं अर्थात् उनकी विश्वमय और विश्वोत्तीर्ण अवस्थाओं में क्रय नहीं रहता। वे साथ-साथ चलती हैं। योगवासिष्ठ में कहा गया है—

चिद्विलासः प्रपञ्चोऽयं सखे ते दुःखदः कथम्।
किमिन्द्रवारुणी राम सितया कटुकी कृता॥

यह संसार वस्तुतः आनन्दमय है क्योंकि यह आनन्दमयी चिति का विलास है। परमसत्ता के स्वेच्छया सङ्कुचित अर्थात् अल्पज्ञ होने के कारण इसमें दुःख और मोह आदि होते हैं। काम, क्रोध आदि छः विकारं इसी अल्प ज्ञान के कारण

अनुभव में आते हैं। यही तन्त्र है बन्धना है। सदाशिव से लेकर पृथिवी तक की सृष्टि इसी सङ्कुचित या अल्पज्ञान का परिणाम है। मन्त्र-महेश्वर से लेकर सामान्य जीव तक के प्राणी इस तन्त्र से न्यूनाधिक रूप से प्रभावित रहते हैं। ज्ञान का संकोच जितना सघन रहता है, दु:खोत्पादक काम-क्रोध आदि उसी मात्रा में प्रबल होते हैं और जीव दु:खावस्था में भी कभी-कभी सुख का अनुभव करता है, यह भी अज्ञान ही है।

काम, क्रोध आदि षड्विकार आभ्यन्तरीण शत्रु हैं। इनके अनुभव के आधार बाह्यविषय होते हैं। सिद्धि की सम्भावना सन्दिग्ध होती है। उड्डीश अथवा अन्य तन्त्रग्रन्थों में षट्कर्म (मारण आदि) की व्यवस्था का मुख्य उद्देश्य इन्हीं कामादि छ: रिपुओं का नियन्त्रण है। प्रस्तुत ग्रन्थ का रहस्यार्थ भी यही है, किन्तु इस सत्कृत्य के सम्पादन में गुरु की भूमिका अति महत्त्वपूर्ण होती है। गुरु के अभाव में डॉ. शशिशेखर चतुर्वेदी ने इसका सव्याख्य सम्पादन कर तन्त्रशास्त्र के विस्तार की शृङ्खला में एक महत्त्वपूर्ण कड़ी का संयोजन किया है। विश्वास है कि उड्डीशतन्त्र का प्रस्तुत संस्करण सुधी पाठकों के हृदय को अवश्य आवर्जित करेगा।

मैं इसके व्याख्याकार एवं सम्पादक डॉ. शशिशेखर चुतर्वेदी के उज्जवल एवं मङ्गलमय भविष्य के लिए शुभकामना करता हूँ।

आचार्य राधेश्याम चतुर्वेदी

॥ श्रीः ॥

आभ्युदयिक

आगम-परम्परा भारतीय संस्कृति द्वारा विश्व-समुदाय के लिए प्रवर्तित सर्वलोकोपकारक शास्त्रविधा है। उपासना तथा प्रक्रियाविधि के वितान के कारण इस शास्त्र की तन्त्रता अन्वर्थ होती है। वस्तुतः आगम-तन्त्र का परम प्रयोजन परतत्त्वाधिगम ही है। शाक्ततन्त्रों में—

ब्रह्माणीत्यपरा शक्तिर्ब्रह्मणोत्सङ्गगामिनी ।

आदि उल्लेखों में ब्रह्मप्राप्ति प्रतिपादित है। ब्रह्माण्डपुराण में 'श्रीविद्या ब्रह्मविद्येति' द्वारा तथा वैष्णवगम में भी परतत्त्वावाप्ति के निरूपण से यह स्पष्ट है। परन्तु आयुष्य की सार्थकता तथा लोकोपकार की भावना से कर्मप्रयोग और उपासनविधि का उपदेश तन्त्रागम का वैशिष्ट्य है। अन्तर्याग बहिर्याग आदि प्रयोगविधियों का स्वारस्य भी परतत्त्वाधिगम में है यह सिद्धान्त—'तमेतं ब्राह्मणा विविदिषन्ति.....यज्ञेन' आदि श्रुति से ज्ञान होता है। सम्भवतः इसी कारण कर्मयागों एवम् उपासनाविधियों के अनुपालन में शङ्कर, रामानुज, मध्व, निम्बार्क, वल्लभ आदि आचार्यों में विशेष सिद्धान्त-भेद नहीं है। अपितु ज्ञानकाण्ड में अद्वैत विशिष्टाद्वैत, द्वैत, द्वैताद्वैत, शुद्धाद्वैत आदि सिद्धान्त भेद स्पष्ट हैं। श्रुत्युपदिष्ट यागादि कर्म-विधान बीजरूप से आगम-तन्त्रोक्त विधियों में अनुस्यूत हैं। अतः मूलतः तथा चरमार्थतः दोनों में भेद नहीं है। शाक्तागमों में तो पराशक्ति को 'ब्रह्म वेदानणति शब्दायते व्याहरतीति ब्रह्माणी' (सौ.भा.१४) व्युत्पत्ति द्वारा वेदोपदेष्ट्री माना गया है। यह शक्ति ही आगम-तन्त्र शास्त्रों की भी अधिष्ठात्री है तथा प्रत्येक प्राणी की अभिलाषपूर्ति के लिए विभिन्न नित्य, नैमित्तिक, काम्यादि कर्मों का विस्तार तन्त्रशास्त्रों के द्वारा प्रवर्तित करती है।

तन्त्रोपदिष्ट कर्मविधान के अन्तर्गत मारण, मोहनादि प्रयोगों के उल्लेख से कतिपय बुद्धिजीवी उद्विग्न हो जाते हैं तथा तन्त्रशास्त्र के प्रति उनकी आस्था विचलित रहती है। परन्तु यह तत्त्वानभिज्ञता के कारण है। वस्तुत: प्रत्येक कर्म के दो पक्ष होते हैं—स्वार्थपरक तथा परोपकारक। परिवार में अवस्थिति भी स्वार्थमूलक होने पर निन्द्य हो जाती है तथा परोपकारक होने पर व्यक्ति की प्रशस्यता होती है। इसी प्रकार मारण-मोहनादि षट्कर्मों का अनुष्ठापन देशरक्षण, आत्मीयत्ववर्धन, दुष्टापसारण आदि समाजोपकार के सदुद्देश्यों के लिए उपदिष्ट है। व्यक्तिगत राग-द्वेष की सफलता के लिए इनका प्रयोग प्रायश्चित्तजनक, हेय तथा वर्जित है। प्रस्तुत ग्रन्थ उड्डीशतन्त्र में भी इनके निरुपणपूर्वक निषेध का यही अभिप्राय है।

संस्कृतशास्त्रों की अविच्छिन्न धारा में आगम तन्त्र के अध्येताओं के लिए यह प्रसन्नता का विषय है कि अल्पज्ञात 'उड्डीशतन्त्र' का सम्पादन तथा सानुवाद प्रकाशन अध्यवसायी युवा विद्वान् डॉ. शशिशेखर चतुर्वेदी ने किया है। उड्डीशतन्त्र नानाविध लौकिक, उपकारक, काम्य प्रयोगों से संवलित ग्रन्थ है। इसके नामकरण के सम्बन्ध में भी अनेक सम्भावनायें उद्भूत होती हैं। मेरा अभिमत है कि त्रैपुरागम में पूर्णगिरिपीठ में 'उड्डीशनाथ' नामक आचार्य का उल्लेख प्राप्त होता है। आचार्य उड्डीशनाथ के उपदेष्टृत्व अथवा प्रवर्तकत्व के कारण यह ग्रन्थ 'उड्डीशतन्त्र' अभिधान से प्रथित है, यह भी सम्भावना है। व्युत्पत्ति और निरुक्ति की प्रक्रिया के अनुसार 'उयते उड्डीयते भक्तानां हृदयाकाशे य:' इस अर्थ से डकार शिववाचक है तथा ईकार श्रीसूक्तादि में शक्तिवाचक है। दोनों के सामरस्य से डीपद आगम-सम्प्रदाय में शिवशक्तिबोधक है। उत् उपसर्ग तथा ईशपदोत्तर 'उड्डीश' अभिधान उस अद्वय तत्त्व के प्रति उच्चतम समर्पण का भाव धारण करता है। ऊर्ध्वगतिशील योगियों के आराध्य स्वामी होने के कारण उड्डीश शिव का भी नाम है।

उड्डीशतन्त्र को पाठालोचन तथा अर्थानुसन्धान से समन्वित कर पाठकवृन्द

के लिए सुलभ कराने का महनीय कार्य शास्त्रसेवी कर्मठ मनीषी डॉ. शशिशेखर चतुर्वेदी ने सम्पन्न किया है। श्रीचतुर्वेदी की सारस्वत-सपर्या के लिए अनेकशः साधुवाद तथा अभिनन्दन करता हूँ। मेरा विश्वास है कि अध्येतृवर्ग में इस कृति को पर्याप्त प्रसार तथा प्रशस्यता प्राप्त होगी।

प्रो. किशोर मिश्र

अध्यक्ष

संस्कृत विभाग, कला सङ्काय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी

प्राक्कथन

वेद और आगम एक दूसरे के पूरक शास्त्र हैं। जिस प्रकार वेद के मन्त्र किसी की रचना नहीं है और उनको अपौरुषेय माना जाता है, उसी प्रकार आगम (तन्त्र) के सूत्र भी किसी मनुष्य की कृति नहीं है और अपौरुषेय हैं। अनादि काल से ही वैदिकी और आगामिक परम्परायें निर्बाधरूप से संसार में चली आ रही हैं। आगम के विषय में कहा गया है—

आगतं शिववक्त्रेभ्यः गतं तु गिरिजाश्रुतौ।
मतं तु वासुदेवेन तस्मादागम उच्यते ।।

तन्त्र के रहस्य को यथावत समझना बहुत कठिन है और उसकी साधना करना तो और भी दुष्कर है। कतिपय लोग कार्य न होने पर मन्त्र को व्यर्थ समझने लगते हैं क्योंकि उन्हें मन्त्र-यन्त्रादि के सिद्ध होने में किये जाने वाले समुचित विधि-विधान का या तो ज्ञान नहीं होता है और या तो विधिसमस्त क्रिया को ज्ञान होने पर कर नहीं पाते। इसीलिए उनके कार्य सफल नहीं होते हैं। तान्त्रिक प्रयोगों को केवल परोपकार के लिए तथा स्वयं के कल्याण के लिए जिससे दूसरों को कोई कष्ट न हो, करना चाहिए। प्रमादवश तान्त्रिक प्रयोगों को करने पर उनके विपरीत प्रभाव स्वयं के ऊपर भी पड़ते हैं। इसीलिये किसी भी व्यक्ति को अनावश्यक केवल अपने क्षुद्र कामनापूर्ति के लिए किसी पर प्रयोग करने से सर्वथा बचना चाहिए।

रावण-शिव के संवादरूप में उड्डीशतन्त्र प्रसिद्ध है। इसमें शान्ति, पुष्टि और वशीकरण आदि षट्कर्मों का वर्णन किया गया है। उड्डीशतन्त्र में निहित श्लोकों की व्याख्या इस प्रकार की गयी है कि श्लोकों का सम्पूर्ण और समुचित अर्थ प्रकाशित हो सके और पाठकों तथा साधकों को किसी भी प्रकार की क्लिष्टता का अनुभव न हो और वे सम्पूर्ण रहस्य को ज्ञात कर लेने के पश्चात् बताये गये

प्रयोगों को सरलता से कर सकें तथा उनके अभिलषित मनोरथ पूर्ण हो सके। इसीलिए हिन्दी टीका का नाम 'विभा' किया गया है।

इस पुस्तक के अन्त में परिशिष्ट भाग भी दिया गया है, जिसमें तान्त्रिकों के द्वारा प्रयुक्त और अनुभूत सिद्ध-मन्त्रों का प्रयोग और उनकी विधि बताई गई है। ये मन्त्र साधकों के मनोरथों को बिना किसी सन्देह के पूर्ण करने वाले हैं। परिशिष्ट भाग में दिये गये प्रयोगों को पूर्णतः समझ लेने के पश्चात् किसी योग्य गुरु के निर्देशन में करने पर पाठक-साधकों को निश्चित रूप से सफलता प्राप्त होगी, ऐसा मेरा पूर्ण विश्वास है।

इस पुस्तक को पूर्ण करने में सर्वप्रथम मैं अपने पिता प्रो. राधेश्याम चतुर्वेदी अवकाशप्राप्त प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय को उनके सहयोग, संशोधन और परामर्श के लिए और पुस्तक का आमुख लिखने के लिए कृतज्ञ हूँ। इसके पश्चात् प्रो. श्री किशोर मिश्र, संस्कृत विभागाध्यक्ष, कलासङ्काय, बी.एच.यू. को सहयोग, प्रेरणा और पुस्तक का आर्शीवचन लिखने के लिए उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। इस पुस्तक को पूर्ण करने में प्रो. राममूर्ति चतुर्वेदी, संस्कृत विभागाध्यक्ष, काशी विद्यापीठ; पण्डित मथुरा प्रसाद शुक्ल, वेदविभागाध्यक्ष, विश्वनाथ गुरुकुल संस्कृत महाविद्यालय कर्णघंटा, वाराणसी और प्रो. दामोदर राम त्रिपाठी, संस्कृत विभागाध्यक्ष, कुमाऊँ विश्वविद्यालय नैनीताल आदि का भी सहयोग रहा है, अतः मैं उन्हें भी हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। यह पुस्तक पाठकों और साधकों के लिए पूर्णतः उपादेय सिद्ध हो, भगवती गायत्री से यही प्रार्थना है। पुस्तक का यह प्रथम संस्करण पाठकों में समक्ष प्रस्तुत है तथा उनसे विनम्र निवेदन है कि वे अतिसावधानी के बाद भी सुलभ मानवीय त्रुटियों की ओर ध्यान आकृष्ट करेंगे ताकि अगले संस्करण में उनका परिमार्जन किया जा सके।

विनीत

शशिशेखर चतुर्वेदी

विषयानुक्रमणी

विषय पृष्ठाङ्क

पूर्वार्द्ध

विषय	पृष्ठाङ्क
षणमुद्रानिरूपण	२२
षट्कर्मों का देवध्याननिरूपण	२२
षट्कर्मों का कुंडनिर्णय	२३
षट्कर्मों की प्रधानता का निरुपण	२५
षट्कर्मों में कुंभस्थापन	२५
कुंभ में पूजन का नियम	२६
षट्कर्मों की माला का निर्णय	२९
जपांगुलीनियम	३१
जप करने में दिशाओं का नियम	३१
जप के लक्षण	३२
षट्कर्मों के जप का नियम	३२
षट्कर्मों के हवन में द्रव्यों का निरूपण	३४
वह्नि की जिह्वा का निरूपण	३८
वह्नि के नाम का निरुपण	४०
होम की व्यवस्था	४१
स्रुक्स्रुवनियम	४२
होम की मुद्रावर्णन	४३
ज्वर आदि की शान्ति	४४
कुकृत्ययशान्ति	४५
विविध आपच्छान्ति	४५
ईश्वरादिक्रोधशान्ति	४६
वशीकरण	४६
राजवशीकरण	४८
स्त्रीवशीकरण	४८

विषय	पृष्ठाङ्क

उत्तरार्द्ध

विषय	पृष्ठाङ्क

परिशिष्ट

●

॥श्रीः॥

उड्डीशतन्त्रम्

हिन्दीटीकासहित

पूर्वार्द्ध

मंगलाचरण

गुरुः साक्षात् शिवोयत्र सच्छिष्यो रावणस्तथा।
संवादस्तु तयोर्यत्र उड्डीशं तन्त्रमेव तत्॥
षट्कर्म प्रोच्यते यत्र सर्वलोकेषु दुर्लभम्।
हिन्दी व्याख्या 'विभा' नाम्नी ज्ञानार्थं क्रियते मया॥

जहाँ गुरु साक्षात् शिवजी हैं और सुयोग्य शिष्य रावण है, उन दोनों (अर्थात् रावण और भगवान् शङ्कर) का जिसमें संवाद (स्वरूप यन्त्र और उनक़े प्रयोग) है, वही उड्डीश तन्त्र (के नाम से प्रसिद्ध) है। सम्पूर्ण संसार (और देवताओं) के लिए दुलर्भ षट्कर्मों (अर्थात् शान्ति, वशीकरण, स्तम्भन, विद्वेषण, उच्चाटन और मारण) का वर्णन जिसमें किया गया है, (उनके सम्पूर्ण) ज्ञान के लिए मेरे द्वारा 'विभा' नामक हिन्दी व्याख्या की जा रही है।

रावण उवाच

कैलासशिखरासीनं रावणः शिवमब्रवीत्।
तन्त्रविद्यां क्षणं सिद्धिं कथयस्व मम प्रभो॥१॥

रावण ने कहा

कैलाश पर्वत की चोटी पर बैठे हुए (भगवान्) शङ्कर से रावण ने कहा—हे भगवन्! क्षणभर में सिद्धि प्रदान करने वाली तन्त्र विद्या को (आप) मुझे बताइये॥१॥

ईश्वर उवाच

साधु पृष्टं त्वया वत्स लोकानां हितकाम्यया।
उड्डीशाख्यमिदं तन्त्रं कथयामि तवाग्रतः ॥२॥

हे पुत्र! तुमने अच्छा प्रश्न किया, (इसलिए) लोकों के कल्याण की कामना से (अर्थात् समस्त संसार के जीवमात्र के कल्याण की इच्छा से) तुमसे इस उड्डीश नामक तन्त्र को कह रहा हूँ॥२॥

उड्डीशं यो न जानाति स रुष्टः किं करिष्यति।
मेरुं चालयते स्थानात्सागरैः प्लावयेन्महीम् ॥३॥

उड्डीश (तन्त्र) को जो नहीं जानता है वह क्रोधित होकर क्या करेगा (अर्थात् उड्डीश तन्त्र के ज्ञान के बिना मनुष्य क्रोधित होकर कुछ भी नहीं कर सकता और वहीं उसके ज्ञान से) मेरु पर्वत को (उसके) स्थान से चलायमान कर सकता है तथा समुद्रों से पृथिवी को डुबो सकता है॥३॥

इन्द्रस्य च यथा वज्रं पाशश्च वरुणस्य च।
यमस्य च यथा दण्डो वह्नेः शक्तिर्यथा दहेत् ॥४॥
तथातन्त्रैर्महायोगान्प्रयोज्योद्यमकर्मणि ।
सूर्यं तु पातयेद्भूमौ नेदं मिथ्या भविष्यति ॥५॥

यथा इन्द्र का वज्र, वरुण का पाश, यमराज का दण्ड तथा अग्नि की शक्ति दाहकता उत्पन्न करने वाली है, उसी प्रकार (इस अर्थात् उड्डीशतन्त्र के महायोगों का प्रयोग करने पर निश्चित रूप से) सूर्य को (भी आकाश से) पृथिवी पर गिराया जा सकता है नहीं तो यह अर्थात् उड्डीशतन्त्र मिथ्या हो जायेगा अर्थात् इसके ज्ञान से सूर्य को आसमान से जब पृथिवी पर गिराया जा सकता है तो अन्य कार्य तो अत्यन्त गौण हैं अर्थात् उनको तो और भी सुगमता से सम्पन्न किया जा सकता है॥४-५॥

शशिहीना यथा रात्री रविहीनं यथा दिनम्।
नृपहीनं यथा राज्यं गुरुहीनस्तथा मनुः ॥६॥

जिस प्रकार चन्द्रमा के बिना रात, सूर्य के बिना दिन और राजा के बिना राज्य (का कोई महत्त्व नहीं होता है) शून्य होता है उसी प्रकार गुरू के (ज्ञान के) बिना मन्त्र (सिद्ध) नहीं होता है अर्थात् महत्त्वहीन तथा व्यर्थ होता है॥६॥

पुस्तके लिखिता विद्या नैव सिद्धिप्रदा नृणाम्।
गुरुं विनापि शास्त्रेऽस्मिन्नाधिकारः कथंचन् ॥७॥

(जैसे) पुस्तक में लिखी हुई विद्या मनुष्यों को सिद्धि प्रदान नहीं कर सकती, (उसी प्रकार) बिना गुरु के उपदेश के इस शास्त्र अर्थात् तन्त्र शास्त्र में (किसी का भी किसी प्रकार से कोई) अधिकार नहीं हो सकता॥७॥

अग्रेऽभिधास्ये शास्त्रेऽस्मिन्सम्यक् षट्कर्मलक्षणम्।
सर्वतन्त्रानुसारेण प्रयोगफलसिद्धिदम् ॥८॥

इस नामवाले शास्त्र में अर्थात् उड्डीशतन्त्र में सर्वप्रथम सम्यक् रूप से षट्कर्मों के लक्षण का वर्णन किया गया है, सभी तन्त्रों के अनुसार इसका प्रयोग करने से कार्य सिद्ध हो जाता है॥८॥

षट्कर्मों के नाम

शान्तिवश्यस्तम्भनानि विद्वेषोच्चाटने तथा।
मारणान्तानि शंसन्ति षट् कर्माणि मनीषिणः ॥९॥

षट्कर्मों के अभिधान

शांतिकर्म, वशीकरण, स्तम्भन, विद्वेषण, उच्चाटन और मारण कर्मों को मनीषी लोग षट्कर्म कहते हैं॥९॥

षट्कर्मों के लक्षण

रोगकृत्यग्रहादीनां निरासः शान्तिरीरिता।
वश्यं जनानां सर्वेषां विधेयत्वमुदीरितम् ॥१०॥
प्रवृत्तिरोधः सर्वेषां स्तम्भनं समुदाहृतम्।
स्निग्धानां द्वेषजननं मिथो विद्वेषणं मतम् ॥११॥
उच्चाटनं स्वदेशादेर्भ्रंशनं परिकीर्तितम्।
प्राणिनां प्राणहरणं मारणं समुदाहृतम् ॥१२॥
स्वदेवतादिक्कालादीन् ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ॥१३॥

षट्कर्मों के लक्षण

(जिससे) रोग, दुष्कर्म तथा ग्रहों (आदि से उत्पन्न दोष) दूर अथवा नष्ट होते हैं, (वह) शान्तिकर्म कहलाता है। (जिसके द्वारा) सभी लोगों (सभी प्राणियों) को वश में (अर्थात् अपने अधीन) किया जाता है, (वह) वशीकरण कहलाता है॥१०॥

सभी (प्राणियों) की प्रवृत्ति अर्थात् गति को रोक देना 'स्तम्भन' कहलाता है (स्तम्भ शब्द से स्तम्भन बना है जिसका तात्पर्य है कि किसी को स्तम्भ अर्थात् खम्भे के समान बना देना)। मित्रों में आपस में शत्रुता पैदा कर देना ही 'विद्वेषण' माना गया है॥११॥

किसी को (उसके) अपने स्थान से दूर करना ही 'उच्चाटन' कहा गया है। प्राणियों के प्राण का हरण अर्थात् जिस कार्य से किसी जीव का प्राण ले लिया जाय वह 'मारण' कहा जाता है॥१२॥

(उपर्युक्त षट्कर्मों के अनुष्ठान में) अपने इष्ट देवता, समय और दिशा आदि को (भली-भाँति) जानकर ही षट्कर्मों का प्रयोग मनुष्य को करना चाहिए॥१३॥

षट्कर्मों के देवता

रतिर्वाणी रमा ज्येष्ठा दुर्गा काली यथाक्रमात् ।
षट्कर्मदेवताः प्रोक्ताः कर्मादौ ताः प्रपूजयेत् ॥१४॥

षट्कर्मों के देवता

यथा क्रम से रति, वाणी, रमा, ज्येष्ठा, दुर्गा तथा काली षट्कर्मों के देवता माने गये हैं। कर्म अथवा अनुष्ठान के आरम्भ में उनका विधिपूर्वक पूजन करना चाहिए। आशय यह है कि रति शांतिकर्म का देवता, वाणी वशीकरण का, स्तम्भन की रमा, विद्वेषण की ज्येष्ठा, उच्चाटन की दूर्गा तथा काली मारण कर्म के देवता हैं। तत्तत् षट्कर्मों के प्रयोग में सर्वप्रथम तत्तत् देवता का विधि-विधान से पूजन करने के पश्चात् ही अनुष्ठान या प्रयोग में व्यक्ति को प्रवृत्त होना चाहिए॥१४॥

षट्कर्मों में दिशा का नियम

ईशचन्द्रनिर्ऋतिवाय्वग्नीनां दिशो मताः ।
क्रमेण कर्मषट्के वै प्रशस्ताः स्युरिमा दिशः ॥१५॥

षट्कर्म में दिशा का नियम

षट्कर्मों के प्रयोगार्थ ईशान, उत्तर, पूर्व, नैऋत, वायुकोण तथा अग्निकोण दिशायें मानी गयी हैं। क्रम से ये दिशायें षट्कर्म में प्रशस्त होनी चाहिए। आशय यह है कि शांति कर्म में ईशान दिशा, वशीकरण में उत्तर, स्तम्भन में पूर्व, विद्वेषण में नैर्ऋत, उच्चाटन में वायुकोण और मारण कर्म में अग्निकोण दिशा का प्रयोग मनुष्यों को करना चाहिए॥१५॥

षट्कर्मों में ऋतुकालादि का निर्णय

सूर्योदयात्समारभ्य घटिकादशकं क्रमात् ।
ऋतवः स्युर्वसन्ताद्या अहोरात्रं दिनेदिने ॥

वसन्तग्रीष्मवर्षाश्च शरद्धेमन्तशैशिराः ॥१६॥
हेमन्तः शान्तिके प्रोक्तो वसन्तो वश्यकर्मणि ।
शिशिरः स्तम्भने ज्ञेयो ग्रीष्मे विद्वेष ईरितः ॥
प्रावृड्डुच्चाटने ज्ञेया शरन्मारणकर्मणि ॥१७॥

षट्कर्मों में ऋतु, काल आदि का उल्लेख

प्रतिदिन, दिन और रात के मध्य सूर्योदय से प्रारम्भ कर दश-दश घड़ी के क्रम से वसन्त आदि छः ऋतुओं को जानना चाहिए (अर्थात् सूर्योदय से १० घड़ी तक वसन्त ऋतु, बीस घड़ी तक ग्रीष्म, तीस घड़ी तक वर्षा, चालिस घड़ी तक शरद, पचास घड़ी तक हेमन्त तथा साठ घड़ी तक शिशिर ऋतु होती है)॥१६॥

तात्पर्य यह है कि सूर्योदय से लेकर सूर्योदय के मध्य में अथवा एक दिन और एक रात मिलाकर चौबीस घंटे की होती है। सूर्योदय से दश घड़ी अर्थात् चार घंटे तक का समय वसन्त ऋतु का होता है; पुनः दश घड़ी अर्थात् चार से आठ घंटे के मध्य का समय ग्रीष्म ऋतु का, आठ से बारह घंटे के मध्य का समय वर्षा ऋतु का, पुनः ३०-४० घड़ी अर्थात् १२-१६ घंटे का समय शरद् ऋतु का, पुनः ४०-५० घड़ी अर्थात् १६-२० घंटे के मध्य का काल हेमन्त ऋतु का और ५०-६० घड़ी अर्थात् २०-२४ घंटे के मध्य का समय शिशिर ऋतु का होता है। एक घड़ी=२४ मिनट, १० घड़ी २४० मिनट अर्थात् चार घंटा। इस प्रकार ६ ऋतु×४ घंटा=२४ घंटा अर्थात् पूरा दिन और पूरी रात।

साधक को शान्ति (कर्म) हेमन्त ऋतु में, वशीकरण वसन्त में, स्तम्भन शिशिर में, विद्वेषण ग्रीष्म में, उच्चाटन वर्षा में तथा मारण कर्म को शरद ऋतु में करना चाहिए॥१७॥

षट्कर्मों में तिथिवार का विधान

प्रयोगा विधिना कार्यास्तच्च संप्रोच्यतेऽधुना।
द्वितीया च तृतीया च पञ्चमी सप्तमी तथा॥
बुधेज्यकाव्यसोमाश्च शान्तिकर्मणिकीर्तिताः॥१८॥

षट्कर्मों में तिथि और दिन का नियम

(अनुष्ठान अथवा) प्रयोग विधि विधान पूर्वक करना चाहिए जो अब बतलाये जा रहे हैं। शान्तिकर्म करने के लिए द्वितीया, तृतीया, पञ्चमी और सप्तमी तिथि तथा बुधवार, गुरुवार तथा सोमवार बतलाये गये हैं। अर्थात् उक्त तिथि और दिन में ही शान्तिकर्म का प्रयोग करना चाहिए। यही विधिसम्मत है॥१८॥

गुरुचन्द्रयुता षष्ठी चतुर्थी च त्रयोदशी।
नवमी पौष्टिके शस्ता चाष्टमी दशमी तथा॥
पुष्टिर्धनजनादीनां वर्द्धनं परिकीर्तितम्॥१९॥

बृहस्पतिवार अथवा सोमवार को पड़ने वाली षष्ठी, चतुर्थी, त्रयोदशी, नवमी, अष्टमी या दशमी तिथि पुष्टि कर्म में श्रेष्ठ मानी गयी हैं। ऐसा करने से लोगों की पुष्टि और धन की वृद्धि होना बतलाया गया है॥१९॥

दशम्येकादशी चैव भानुशुक्रदिने तथा।
आकर्षणे त्वमावस्या नवमी प्रतिपत्तथा॥२०॥

(इसी प्रकार) दशमी, एकादशी, अमावस्या, नवमी अथवा प्रतिपदा तिथि तथा शुक्रवार और रविवार के दिन साधकों को आकर्षण का प्रयोग करना चाहिए॥२०॥

पौर्णमासी मन्दभानुयुक्ता विद्वेषकर्मणि॥२१॥

शनिवार अथवा रविवार के दिन पड़ने वाली पूर्णिमा तिथि विद्वेषण कर्म के लिए उपयुक्त मानी गयी है अर्थात् उक्त तिथि और दिन में ही विद्वेषण का प्रयोग करना चाहिए॥२१॥

षष्ठी चतुर्दशी तद्वदष्टमी मन्दवारकः ।
उच्चाटने तिथिः शस्ता प्रदोषे सुविशेषतः ॥२२॥

शनिवार के दिन पड़ने वाली षष्ठी, चतुर्थी तथा अष्टमी तिथि में, विशेष रूप से प्रदोष के समय उच्चाटन का प्रयोग श्रेयस्कर माना गया है॥२२॥

चतुर्दश्यष्टमी कृष्णा अमावस्या तथैव च ।
मन्दारार्कदिनोपेता शस्ता मारणकर्मणि ॥२३॥

मारण कर्म के प्रयोग में कृष्णपक्ष की चतुर्दशी, अष्टमी और अमावस्या तिथि एवं शनिवार और रविवार का दिन श्रेयस्कर माना गया है॥२३॥

अर्थात् उक्त तिथि एवं दिन में मारण कर्म का अनुष्ठान करने पर साधक को श्रेष्ठ परिणाम प्राप्त होता है।

बुधचन्द्रदिनोपेता पंचमी दशमी तथा ।
पौर्णमासी च विज्ञेया तिथिः स्तम्भनकर्मणि ॥२४॥

स्तम्भन के प्रयोग में बुधवार अथवा सोमवार के दिन पड़ने वाली पञ्चमी, दशमी और पूर्णिमा तिथि को ज़ानना चाहिए॥२४॥

अर्थात् उपर्युक्त दिनों को षड़ने वाली उपर्युक्त तिथियों में स्तम्भन का अनुष्ठान श्रेष्ठ फलदायी होता है।

शुभग्रहोदये कुर्यादशुभान्यशुभोदये ।
रौद्रकर्माणि रिक्तार्के मृत्युयोगे च मारणम् ॥२५॥

शुभ अर्थात् कल्याणकारक ग्रहों के उदय काल में शान्ति आदि शुभ कर्मों को तथा अशुभ ग्रहों के उदय में मारण आदि अशुभ कर्मों को करना चाहिए। रविवार के दिन पड़ने वाली रिक्ता तिथि में विद्वेषण और उच्चाटन इत्यादि रौद्र अर्थात् क्रूर कर्म का प्रयोग तथा मृत्युयोग में साधक को मारण का अनुष्ठान करना चाहिए॥२५॥

षट्कर्मों के नक्षत्र का नियम

स्तम्भनं मोहनं चैव वशीकरणमुत्तमम्।
माहेन्द्रे[1] वारुणे[2] चैव कर्त्तव्यमिह सिद्धिदम्॥२६॥

षट्कर्मों के नक्षत्र का वर्णन

माहेन्द्र (अर्थात् ज्येष्ठा, उत्तराषाढा, अनुराधा तथा रोहिणी नामक चार नक्षत्र) और वारूण (अर्थात् उत्तर भाद्रपद, मूल, शतभिषा, पूर्व भाद्रपद तथा आश्लेषा नामक पाँच) मण्डलगत नक्षत्रों में स्तम्भन, मोहन (आकर्षण) तथा वशीकरण का प्रयोग करना सिद्धि प्रदान करने वाला होता है॥२६॥

विद्वेषोच्चाटने वह्नि[3] वायुयोगे च कारयेत्॥२७॥

अग्निमण्डल (अर्थात् स्वाति, हस्ति, मृगशिरा, चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, पुष्य और पुनर्वसु नामक सप्त नक्षत्र) तथा वायुमण्डलगत (अर्थात् अश्विनी, भरणी, आर्द्रा, धनिष्ठ, श्रवण, मघा, विशाखा, कृतिका, पूर्वाफाल्गुनी तथा रेवती नामक दश नक्षत्र) नक्षत्रों में विद्वेषण तथा उच्चाटन का प्रयोग साधकों को करना चाहिए॥२७॥

---

१. ज्येष्ठा चैवोत्तराषाढ़ा चानुराधा च रोहिणी।
माहेन्द्रमण्डलं ह्येतत्सर्वकर्मप्रसिद्धिदम्॥

ज्येष्ठा, उत्तराषाढा, अनुराधा और रोहिणी—ये चार नक्षत्र माहेन्द्र मण्डल मध्यगत हैं।

२. स्यादुत्तराभाद्रपदा मुलं मूलं शतभिषा तथा।
पूर्वाभाद्रपदाऽऽश्लेषा ज्ञेया वारुणमध्यगाः॥

उत्तराभाद्रपद, मूल, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद और आश्लेषा—ये पाँच नक्षत्र वारुणमंडलगत हैं।

३. अश्विनी भरणी आर्द्रा धनिष्ठा श्रवणे मघा।
विशाखा कृत्तिका पूर्वाफल्गुनी रेवती तथा।
वायुमंडलमध्यस्थास्तत्तत्कर्मप्रसिद्धिदाः॥

अश्विनी, भरणी, आर्द्रा, धनिष्ठा, श्रवण, मघा, विशाखा कृतिका पूर्वाफाल्गुनी और रेवती— ये १० नक्षत्र वायुमंडलमध्यगत हैं।

षट्कर्मों के कालविशेष का कथन

वश्यं पूर्वेऽह्नि मध्याह्ने विद्वेषोच्चाटने तथा।
शान्तिपुष्टी दिनस्यान्ते संध्याकाले च मारणम् ॥२८॥

षट्कर्मों के कालविशेष का उल्लेख

पूर्वाह्न में वशीकरण, मध्याह्न अर्थात् दोपहर में विद्वेषण तथा उच्चाटन, दिन के अन्त में शान्ति एवं पुष्टि और सन्ध्या के समय मारण का अनुष्ठान करना चाहिए॥२८॥

षट्कर्मों का लग्ननिरूपण

कुर्याच्च स्तम्भनं कर्म हर्यक्षे वृश्चिकोदये।
द्वेषोच्चाटादिकं कर्म कुलीरे वा तुलोदये ॥२९॥

षट्कर्मों के लग्न का उल्लेख

स्तम्भन कर्म का अनुष्ठान सिंह अथवा वृश्चिक लग्न में, विद्वेषण और उच्चाटन का प्रयोग कर्क अथवा तुला लग्न में करना चाहिए।

मेषकन्याधनुर्मीने वश्यशान्तिकपौष्टिकम्।
मारणोच्चाटने चासौ रिपुभेदविनिग्रहे ॥३०॥

मेष, कन्या, धनु और मीन लग्न में वशीकरण, शान्ति, पुष्टि, मारण, उच्चाटन तथा शत्रुनिवारणादि कर्मों का प्रयोग साधकों को करना चाहिए॥३०॥

षट्कर्मों के तत्त्वनिरूपण

जलं शान्तिविधौ शस्तं वश्ये वह्निरुदीरितः।
स्तम्भने पृथिवी शस्ता विद्वेषे व्योम कीर्त्तितम् ॥
उच्चाटने स्मृतो वायुर्भूम्यग्निर्मारणे मतः ॥३१॥

षट्कर्मों के तत्त्व

शान्ति कर्म के प्रयोग में जल, वशीकरण में अग्नि, स्तम्भन में पृथिवी, विद्वेषण में आकाश, उच्चाटन में वायु, पृथिवी और अग्नि (तत्त्व के उदय में) मारण कर्म का अनुष्ठान करना श्रेयस्कर माना गया है।।३१।।

तत्त[1]द्भूतोदये सम्यक्तत्तन्मण्डलसंयुतम् ।
तत्तत्कर्म विधातव्यं मन्त्रिणा निश्चितात्मना ।।३२।।

(इस प्रकार तत्त्वों के उदय का ज्ञान करके) तत्तत् तत्त्वों के उदय में तत्तत् (माहेन्द्र आदि) सामयिक तत्त्वों का मण्डल बनाकर तत्तत् कर्म का (शान्ति, वशीकरण आदि का) सम्यक् रूप से मन्त्र साधक को स्थिरचित्त होकर अनुष्ठान करना चाहिए।।३२।।

षट्कर्मों के देवताओं का वर्णभेदनिरूपण

वश्ये चाकर्षणे क्षोभे रक्तवर्णं विचिन्तयेत् ।
निर्विषीकरणे शान्तौ पुष्टौ चाप्यायने सितम् ।।३३।।

षट्कर्मों के देवता का वर्णभेद से उल्लेख

वशीकरण, आकर्षण और क्षोभन कर्मों के प्रयोग में देवता के रक्तवर्ण तथा विष निवारण, शान्ति और पुष्टिकर्म के अनुष्ठान में (देवता को) श्वेत वर्ण के होने का ध्यान करना चाहिए।।३३।।

अर्थात् वशीकरण, आकर्षण क्षोभन कर्मों के प्रयोग में देवता को लाल रंग का और विष निवारण, शान्ति और पुष्टि कर्मों में देवता शुभ्रवर्ण अर्थात् श्वेत रंग का है—ऐसा मानकर साधक को उस देवता का ध्यान करना चाहिए।

पीतं स्तंभनकार्येषु धूम्रमुच्चाटने स्मृतम् ।
उन्मादे शक्रगोपाभं कृष्णवर्णं तु मारणे ।।३४।।

१. तत्त्वों को जानने और अभ्यास करने के लिए 'शिवस्वरोदय' नामक पुस्तक देखनी चाहिए।

स्तम्भन में पीले रंग के, उच्चाटन में धूँयें के रंग के, उन्माद में लोहित वर्ण के तथा मारण (कर्म के अनुष्ठान) में कृष्ण अर्थात् काले रंग के देवता का ध्यान साधक को करना चाहिए।।३४।।

षट्कर्म के देवताओं की उत्थितादि
अवस्थानिरूपण

उत्थितं मारणे ध्यायेत्सुप्तमुच्चाटने प्रभुम् ।
उपविष्टं राक्षसेन्द्र सर्वत्रैव विचिन्तयेत् ॥३५॥

षट्कर्म के देवताओं की अवस्था

हे राक्षस श्रेष्ठ! (हे रावण!) मारण कर्म (के अनुष्ठान) में देवता को उठे हुए (जाग्रत रूप में), उच्चाटन में सोये हुए तथा अन्य सभी कर्मों में (अनुष्ठान के स्वामी देवता का) अच्छी तरह से आसन पर बैठे हुए के रूप में साधक को चिन्तन अर्थात् ध्यान करना चाहिए।।३५।।

षट्कर्मों के देवताओं का सात्त्विकादिकर्म में
वर्णविशेषचिन्तन

आसीनं श्वेतरूपं तु सात्त्विके समुदाहृतम् ।
राजसे पीतवर्णं तु रक्तं श्याममुदाहृतम् ॥
यानमार्गस्थितं तूर्णं कृष्णं तामस उच्यते ॥३६॥

षटकर्मों के देवताओं का सात्त्विक आदि कर्म में
रंग विशेष का वर्णन

सात्त्विक कर्म में (आसन पर बैठा हुआ) समासीन और शुभ्र रंग, राजस् कर्म में पीला, लोहित अथवा श्याम वर्ण और तामस् कर्म में यान (विमान) पर बैठकर जाते हुए और काले रंग के देवता का साधकों को ध्यान करना चाहिए।।३६।।

सात्त्विकं मोक्षकामानां राजसं राज्यमिच्छताम् ।
तामसं शत्रुनाशार्थं सर्वं व्याधिनिवारणम् ॥
सर्वोपद्रवशान्त्यर्थं तामसं तु विचिन्तयेत् ॥३७॥

मोक्ष की कामना करने वाले पुरुष सात्विक और राज्य की कामना करने वाले (राजस् व्यक्ति को) राजस् कर्म का अनुष्ठान करना चाहिए। शत्रुओं के विनाश के लिए, सम्पूर्ण कष्टों के निवारण के लिए और सभी प्रकार के उपद्रवों की शान्ति के लिए तामस् कर्म का (प्रयोग) करना चाहिए॥३७॥

मन्त्र के अधिष्ठातृदेवता का निरूपण

रुद्रारताक्ष्यंगन्धर्वयक्षरक्षोऽहिकिन्नराः ।
पिशाचभूतदैत्येन्द्रसिद्धाः किं पुरुषाः सुराः ॥३८॥
सर्वेषामपि मंत्राणामेते पञ्चदश स्मृताः ।
केचिदष्टादश प्राहुः समग्राणां नृणां मताः ॥३९॥

मन्त्र के अधिष्ठातृ देवता

रुद्र, मङ्गल, गरुड़, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, भुजङ्ग, किन्नर, पिशाच, भूत, दैत्य, इन्द्र, विद्याधर, असुर, तथा सिद्ध—ये १५ देवता सभी मन्त्रों के अधिष्ठातृ देवता हैं। समग्र पुरूषों में कतिपय (ऋषि) १८ देवताओं को अधिष्ठातृ देवता मानते हैं॥३८-३९॥

मंत्रों का वर्णभेदसे संज्ञानिरूपण

कर्त्तरी ह्येकवर्णश्च सूची द्व्यक्षरवर्णकः ।
त्र्यक्षरो मुद्गरः प्रोक्तो मुसलश्चतुरक्षरः ॥४०॥
क्रूरः शनिः पञ्चवर्णैः षड्भिर्वर्णैस्तु शृंखलः ।
क्रकचः सप्तभिः शूलं चाष्टभिर्नवभिः पविः ॥४१॥
शक्तिश्च दशभिश्चैकादशभिः परशुः स्मृतः ।
चक्रं द्वादशभिर्वर्णैः कुलिशः स्यात्त्रयोदशैः ॥४२॥

चतुर्दशैस्तु नाराचो भुशुण्डी पक्षवर्णकः ।
पद्मं षोडशभिर्वर्णैर्मन्त्रच्छेदे तु कर्त्तरी ॥४३॥
भेदे तु कथिता सूची भञ्जने मुद्गरः स्मृतः ।
मुसलं क्षोभणे बंधे शृंखलः क्रकचश्छिदि ॥४४॥
घाते शूलं पविं स्तंभे शक्तिं बन्धे च कर्मणि ।
विद्वेषे परशुं चक्रं सर्वकर्मसु योजयेत् ॥४५॥
उत्सादे कुलिशः स्तंभो नाराचः सैन्यभेदने ।
भुशुण्डी मारणे पद्मं शान्तिपुष्ट्यादिकर्मणि ॥४६॥

मन्त्रों का वर्णभेद से अभिधान

एक वर्ण के मन्त्र को कर्त्तरी (छुरी), दो वर्ण के मन्त्र को सूची (सूई), तीन अक्षर के मन्त्र को मुद्गर, चार अक्षर वाले मन्त्र को मुशल, पाँच अक्षर वाले को क्रूर, षट् अक्षरवाले को शृंखला, सप्ताक्षर वाले को वज्र, दश अक्षर वाले को शक्ति, ग्यारह अक्षर वाले को परशु, बारह अक्षर वाले को चक्र, तेरह अक्षर वाले को कुलिश, चौदह अक्षर वाले मन्त्र को नाराच, पन्द्रह अक्षर वाले मन्त्र को भुशुण्डी, सोलह अक्षर वाले मन्त्र को पद्म कहा गया है। मन्त्रच्छेद में कर्त्तरी, भेद कर्म में सूची, भञ्जन में मुद्गर, क्षोभन में मुशल, बंधन में शृंखला (जंजीर), छेदन में क्रकच, घात में शूल, स्तम्भन में पवि, विद्वेषण में परशु (फावड़ा), सभी कर्म में चक्र, उन्माद में कुलिश, सैन्य भेद में नाराच, मारण में भुशुण्डी तथा शांति और पुष्टि आदि कर्मों में पद्म की योजना करनी चाहिए॥४०-४६॥

कार्यविशेष में योजना पल्लवादि का निर्णय

पञ्चाशद्वर्णरूपात्मा मातृका परमेश्वरी ।
तत्रोत्पन्ना महाकृत्या त्रैलोक्याभयदायिनी ॥
यथाकामं जपः कार्यो मंत्राणामपि मे शृणु ॥४७॥

कार्य विशेष में योजनादि का उल्लेख

पचास वर्णमयी मातृका देवी परमेश्वरी से उत्पन्न (मन्त्र) तीनों लोकों के भय को दूर करते हैं। (इस प्रकार मनुष्य को) जैसी अभिलाषा हो, वैसे मन्त्र का जप करना चाहिए (हे रावण! तुम) यह मुझसे सुनो।।४७।।

(अर्थात् व्यक्ति को अपनी मनोकामना के अनुसार मन्त्रों का जप करना चाहिए। जप के प्रभाव के कारण ही मनुष्य का मनोरथ सिद्ध हो जाता है।)

मन्त्रादौ योजनं नाम्नः पल्लवः परिकीर्तितः ।
मारणे विश्वसंहारे ग्रहभूतनिवारणे ।।
उच्चाटनेषु विद्वेषे पल्लवः परिकीर्तितः ।।४८।।

मन्त्र के प्रारम्भ में नाम आदि की योजना पल्लव कहलाती है। मारण, विश्वसंहार, ग्रहभूत आदि से निवारण, उच्चाटन और विद्वेषण कर्मों में पल्लव सहित (अर्थात् नाम के साथ) साधकों को मन्त्र का प्रयोग करना चाहिए।।४८।।

मन्त्रान्ते नामसंस्थानं योग इत्यभिधीयते ।
शान्तिके पौष्टिके वश्ये प्रायश्चित्तविशोधने ।।४९।।
मोहने दीपने योगं प्रयुञ्जन्ति मनीषिणः ।
स्तम्भनोच्चाटनोच्छेदविद्वेषेषु स चोच्यते ।।५०।।

(हे रावण!) मन्त्र के अन्त में नाम होने पर उसे 'योग' कहा जाता है। शान्ति, पुष्टि, वशीकरण, प्रायश्चित्त, मोहन और दीपन कर्मों के प्रयोग में मन्त्र के अन्त में मनीषी लोग नाम की योजना करते है। स्तम्भन, उच्चाटन और विद्वेषण में भी (मन्त्र के अन्त में नाम की) योजना करके ही साधकों को मन्त्र का जप करना चाहिए।।४९-५०।।

नाम्न आद्यन्तमध्येषु मन्त्रः स्याद्रोधसंज्ञकः ।
मन्त्राभिमुख्यकरणे सर्वव्याधिनिवारणे ।।
ज्वरग्रहविषाद्यार्त्तिशान्तिकेषु स चोच्यते ।।५१।।

नाम के आदि, मध्य तथा अन्त में यदि मन्त्र हो तो उसे 'रोध' कहा जाता है। अभिमुखीकरण, सर्वव्याधिनिवारण तथा ज्वर, ग्रह, विष आदि की शान्ति के लिए रोधमन्त्र का जप करना चाहिए।।५१।।

एकैकान्तरितं यत्तु ग्रथनं परिकीर्तितम्।
तच्छान्तिके विधातव्यं नामद्यान्ते यथा मनुः ।।५२।।
तत्सम्पुटं भवेत्तत्तु कीलने परिभाषितम्।
स्तम्भे मृत्युञ्जये हीच्छेद्रक्षादिषु च संपुटम् ।।५३।।

(हे रावण!) नाम के प्रत्येक अक्षर के बाद मन्त्र रहने पर वह 'ग्रथन (मन्त्र)' कहलाता है। शान्ति कर्म के प्रयोग में ग्रथन मंत्र का जप करना चाहिए, नाम के आदि में अनुलोम तथा अन्त में विलोम मंत्र रहने पर वह सम्पुट मन्त्र कहलाता है। कीलन कर्म, स्तम्भन, मृत्युञ्जय अर्थात् मृत्यु निवारण तथा रक्षा आदि कर्मों में इस (सम्पुट मन्त्र) का प्रयोग करना चाहिए।।५२-५३।।

मन्त्रमादौ वदेत्सर्वं साध्यसंज्ञामनन्तरम्।
विपरीतं पुनश्चान्ते संपुटं तत्स्मृतं बुधैः ।।५४।।

सर्वप्रथम पूरे मन्त्र का उच्चारण करने के बाद साध्य नाम का उच्चारण करना चाहिए और पुनः अन्त में उल्टा सम्पूर्ण मन्त्र का उच्चारण करना चाहिए। इसी को ज्ञानी लोग (तांत्रिक लोग) सम्पुट मन्त्र कहते हैं।।५४।।

मन्त्रार्णद्वन्द्वमेकैकं साध्यनामाक्षरं क्रमात्।
कथ्यते सविदर्भस्तु वश्याकर्षणपौष्टिके ।।५५।।

(हे रावण!) मन्त्र का दो-दो अक्षर तथा साध्य नाम का दो-दो अक्षर क्रम पूर्वक उच्चारण करना सविदर्भ मन्त्र कहलाता है। वशीकरण, आकर्षण और पुष्टि कर्मों के अनुष्ठान में इसका (सविदर्भ मंत्र का) प्रयोग करना चाहिए। (अर्थ यह है कि मन्त्र के दो अक्षर के उच्चारणोपरान्त साध्य नाम के दो अक्षर का उच्चारण करे। पुनः मंत्र के दो अक्षरों का उच्चारण कर साध्य नाम

के दो अक्षरों का उच्चारण करे। इस प्रकार मन्त्र तथा साध्य नाम् के दो-दो अक्षरों का क्रम बनाना चाहिए)।।५५।।

कर्मविशेष में हुं फट और वौषट् आदि का निरूपण

बन्धनोच्चाटने द्वेषे संकीर्णे हुंपदं जपेत्।
फट्कारं छेदने हुंफटरिष्टग्रहनिवारणे ।।५६।।
पुष्टौ चाप्यायने वौषट् बोधने मलिनीकृतौ।
अग्निकार्ये जपेत्स्वाहां नमः सर्वत्र चार्च्चने ।।५७।।

कर्म विशेष में हुँ फट् आदि के प्रयोग का नियम

बन्धन, उच्चाटन और विद्वेषण में 'हुँ', छेदन में 'फट्', अरिष्ट ग्रहों की शान्ति में 'हुँ फट्', पुष्टि तथा शान्ति कर्म में 'वौषट्', अग्नि कार्य अर्थात् हवन में 'स्वाहा' और पूजन-अर्चन में सर्वत्र 'नमः' का साधकों को प्रयोग करना चाहिए।।५६-५७।।

शान्तिपुष्टिवशद्वेषाकृष्ट्युच्चाटनमारणे।
स्वाहा स्वधा वषट् हुं च वौषट् फट् योजयेत्क्रमात् ।।५८।।

(हे रावण!) शान्ति, पुष्टि, वशीकरण, विद्वेषण, आकर्षण, उच्चाटन और मारण कर्मों के अनुष्ठान में क्रमशः स्वाहा, स्वधा, वषट्, हुँ, वौषट् और फट् का प्रयोग करना चाहिए। (अर्थात् शान्ति तथा पुष्टि कर्मों में स्वाहा, वशीकरण में स्वधा, विद्वेषण में वषट्, आकर्षण में हुँ, उच्चाटन में वौषट् और मारण मन्त्रों के प्रयोग के अवसर पर अनुष्ठान कर्त्ता को फट् का प्रयोग करना चाहिए)।।५८।।

वश्याकर्षणसन्तापज्वरे स्वाहां प्रकीर्त्तयेत्।
क्रोधोपशमने शान्तौ प्रीतौ योज्यं नमो बुधैः ।।५९।।

वशीकरण, आकर्षण तथा बुखार की गर्मी को शान्त करने के लिए 'स्वाहा' का प्रयोग करना चाहिए। विद्वान् लोगों (तांत्रिक गणों) को क्रोध की शान्ति, शान्ति कर्म तथा प्रेमवर्धन कर्म में नमः का प्रयोग करना चाहिए।।५९।।

वौषट् संमोहनोद्दीपपुष्टिमृत्युञ्जयेषु च ।
हुंकारं प्रीतिनाशे च छेदने मारणे तथा ॥६०॥

सम्मोहन, उद्दीपन, पुष्टि और मृत्यु को दूर करने के अनुष्ठान में 'वौषट्' का प्रयोग करना चाहिए। प्रेम-विच्छेदन, छेदन तथा मारण कर्मों के अनुष्ठान में 'हुँ' (इस बीज मन्त्र) का साधकों को प्रयोग करना चाहिए॥६०॥

उच्चाटने च विद्वेषे वौषट् चान्धीकृतौ वषट् ।
मंत्रोद्दीपनकार्येषु लाभालाभ वषट् स्मृतम् ॥६१॥

(किसी के) उच्चाटन और विद्वेषण में वौषट्, (किसी को) अन्धा करने में वषट्, मन्त्र को हमेशा जागृत और सिद्ध रखने में तथा लाभ-हानि के कर्मों के अनुष्ठान में अनुष्ठानकर्त्ता को वषट् (बीजाक्षर) का प्रयोग करना चाहिए॥६१॥

मंत्रों के स्त्रीपुंनपुंसकादिनिरूपण

स्त्रीपुंनपुंसकत्वेन त्रिधा स्युर्ममन्त्रजातयः ।
स्त्रीमन्त्रा वह्निजायांता नमोऽन्ताश्च नपुंसकाः ॥६२॥
हुंफट् पुमांस इत्युक्ता वश्यशान्त्यभिचारके ।
क्षुद्रक्रियाद्युपध्वंसे स्त्रियोऽन्यत्र नपुंसकाः ॥६३॥

मंत्रों के स्त्री आदि का उल्लेख

सम्पूर्ण मन्त्र स्त्री, पुरुष और नपुंसक के भेद से तीन प्रकार के होते हैं। जिन मन्त्रों के अन्त में 'स्वाहा' आये वह स्त्रीसंज्ञक, जिन मन्त्रों के अन्त में 'नमः' आये वे नपुंसक तथा जिनके अन्त में 'हुँ 'फट्' आये वे पुरुष संज्ञक मन्त्र माने जाते हैं॥६२॥ वशीकरण, शान्ति तथा अभिचार कर्मों में पुरुष संज्ञक मन्त्र, तुच्छ क्रियादि के नाश में स्त्री संज्ञक मन्त्र तथा शेष अन्य सभी कर्मों में नपुंसक संज्ञक मन्त्रों का प्रयोग करना चाहिए॥६३॥

तारांत्याग्निविषप्रायो मन्त्र आग्नेय उच्यते।
सौम्यश्च मनवः प्रोक्ता भूयिष्ठेन्द्वमृताक्षराः ॥६४॥

जिस मन्त्र के अन्त में ॐकार हो वह आग्नेय (मन्त्र) कहलाता है। जिस मन्त्र में इन्दु और अमृताक्षर विद्यमान हो वह सौम्य मन्त्र कहा जाता है।।६४।।

आग्नेयमंत्राः सौम्याः स्युः प्रायशोऽन्ते नमोऽन्विताः।
मंत्रः शान्तोऽपि रौद्रत्वं हुं फट् पल्लवितो यदि ॥६५॥

यदि आग्नेय मन्त्र अन्त में 'नमः' शब्द से अन्वित हो तो वह भी सौम्य मन्त्र कहलाता है। यदि सौम्य मन्त्र शान्त और रौद्र हो लेकिन 'हुँ' 'फट्' से पल्लवित हो तो वह भी आग्नेय मन्त्र कहलाता है।।६५।।

सुप्तः प्रबुध्यमानोऽपि मन्त्रः सिद्धिं न गच्छति ॥६६॥

सुप्त मन्त्र जागृत करने पर भी कभी सिद्ध नहीं होता है।।६६।।

स्वापकालो वामवाहो जागरो दक्षिणावहः।
स्वापकाले तु मन्त्रस्य जपो न च फलप्रदः ॥६७॥

नाशिका के बायें छिद्र से जिस समय श्वास निकलता है वह समय मन्त्र की सुप्तावस्था तथा जब दायें छिद्र से श्वास निकले तो वह समय मन्त्र की जाग्रत अवस्था होती है। सुप्तावस्था में मन्त्र का जप करना व्यर्थ सिद्ध होता है अर्थात् दाहिने स्वर में मन्त्र का जप सिद्धि प्रदान करने वाला होता है और वाम स्वर में निष्फल होता है।।६७।।

आग्नेयाः संप्रबुध्यन्ते प्राणे चरति दक्षिणे।
वामे चरति सौम्याश्च प्रबुद्धा मन्त्रिणां सदा ॥६८॥

मन्त्रों को जपने वाला नाशिका के दाहिने छिद्र से श्वास निकलते समय (यदि मन्त्र का जप करे तो) हमेशा आग्नेय मन्त्र जागृत होता है तथा वाम छिद्र से श्वास निकले (यदि उस समय सौम्य मन्त्र का जप करे) तो सौम्य मन्त्र जागृत हो जाता है।।६८।।

नाडीद्वयगते प्राणे सर्वे बोधं प्रयान्ति च।
प्रयच्छन्ति फलं सर्वे प्रबुद्धा मन्त्रिणां सदा ॥६९॥

(हे रावण!) नाक के दोनों छेद से श्वास निकलते समय (यदि कोई मन्त्र जपा जाय) सभी मन्त्र जागृत हो जाते हैं। सभी जागृत मन्त्रों का जप करने से मन्त्र साधकों को सदैव निश्चित रूप से सिद्धि (फल) की प्राप्ति हो जाती है॥६९॥

षट्कर्मों के आसन का निरूपण

आसनानि प्रवक्ष्यामि कर्मणां विहितान्यपि।
पद्मासनं पौष्टिके तु शान्तिके स्वस्तिकासनम् ॥७०॥

षट्कर्मों के आसन

(हे रावण!) अब षट्कर्मों के विहित आसनों को (मैं तुमको) बता रहा हूँ। पद्मासन[१] में पुष्टि कर्म का अनुष्ठान तथा स्वस्तिकासन[२] में शान्तिकर्म का प्रयोग करना चाहिए॥७०॥

आकृष्टे पौष्टिके तद्वद्विद्वेषे कुक्कुटासनम्।
अर्द्धस्वस्तिकमुच्चाटे अर्द्धस्थापनपार्विणकम् ॥७१॥

---

१. 'वामोरूपरि दक्षिणं हि चरण संस्थाप्य वामं तथा
दक्षोरूपरि पश्चिमेन विधिना धृत्वा कराभ्यां दृढम्।
अंगुष्ठे हृदये निधाय चिबुकं नासाग्रमालोक्ये-
देतद्व्याधिविनाशनाशनकरं पद्मासनं चोच्यते ॥'

दाहिना चरण बाँये ऊरु पर और वाम चरण दाहिने ऊरु पर रख पीठ की ओर दोनों हाथ करके दाहिने हाथ से दाहिने चरण के अंगूठे को और बाँये हाथ से बाँये चरण के अंगूठे को पकड़, हृदय में ठोड़ी लगाकर नेत्रों से नासिका का अग्रभाग अवलोकन करे (देखे) इसको पद्मासन कहते हैं। इसके द्वारा रोग नष्ट होते है और उदर प्रदप्ति होती है।

२. 'जानूवोरन्तरे सम्यक् धृत्वा पादतले उभे।
समकायं सुखासीनं स्वस्तिकं तु प्रचक्षते ॥'

दोनों जंघा के अन्तर में दोनों चरणों को रखकर समकाय सुख से बैठने को स्वस्तिकासन कहते हैं।

आकर्षण, पुष्टिकर्म और विद्वेषण कर्म का अनुष्ठान कुक्कुटासन[१] (मुर्गासन) में करना चाहिए, जिसमें शरीर का भार आधी हथेली पर पड़े। आधे स्वस्तिकासन में उच्चाटन कर्म का अनुष्ठान करना चाहिए।।७१।।

मारणे स्तंभने तद्वद्विकटं परिकीर्त्तितम्।
वश्ये भद्रासनं तेषां कथ्यते चाथ भावना ।।७२।।

विकटासन[२] में मारण और स्तम्भन कर्मों का अनुष्ठान करना बताया गया है। वशीकरण का अनुष्ठान भद्रासन[३] में करना कहा गया है। अर्थात् भद्रासन में वशीकरण मन्त्र का प्रयोग करना चाहिए और बाद में भावना करनी चाहिए कि व्यक्ति मेरे वश में आ रहा है।।७२।।

वश्ये मेषासनं प्रोक्तमाकृष्टौ व्याघ्रचर्म च।
उष्ट्रासनं तथोच्चाटे विद्वेषे तुरगासनम् ।।७३।।

भेड़ के चमड़े के आसन पर बैठकर साधकों को वशीकरण मन्त्र का प्रयोग करना चाहिए तथा बाघ के चमड़े से बने हुए आसन पर बैठकर

---

१. 'पद्मासनं समासाद्य जानूर्वोरन्तरे करौ।
कूर्पराभ्यां समासीनो मञ्चस्थः कुक्कुटासनम् ।।'

मंचस्थ होकर पद्मासन लगाये, दोनों जंघाओं के ऊरुओं के बीच दोनों हाथ डालकर दोनों हाथों से दोनों चरणों के अंगूठे को पकड़ने को कुक्कुटासन कहते हैं।

२. 'जानुजङ्घोन्तरालेषु भुजयुग्मं प्रवेशयेत्।
विकटासनमेतत्स्यादुपविष्टं प्रचक्ष्यते ।।'

जानु और जंघाओं के बीच दोनों हाथों को डालकर बैठने को विकटासन कहते है।

३. 'गुल्फौ च वृषस्याधो व्युत्क्रमेण समास्थिताः।
पादांगुष्ठे कराभ्यां च धृत्वां च पृष्ठदेशतः ।।
जालन्धरं समासाद्य नासाग्रमवलोकयेत् ।।
भद्रासनं भवेदेतत्सर्वव्याधिविनाशकम् ।।'

कोष के नीचे दोनों गुल्फों को विपरीत भाव से रखकर पीठ की ओर दोनों हाथों से दोनों पैरों के अँगूठों को पकड़कर, जालन्धर बंध करके नासिका के अग्रभाग को देखे, इसको भद्रासन कहते हैं। इस आसन के अभ्यास से सम्पूर्ण रोग नष्ट हो जाते हैं।

आकर्षण मन्त्र का प्रयोग करना चाहिए, ऊँट के चर्मनिर्मित आसन पर उच्चाटन मन्त्र का प्रयोग तथा घोड़े के चर्मनिर्मित आसन पर बैठकर विद्वेषण मन्त्र का अनुष्ठान करना चाहिए॥७३॥

मारणे माहिषं चर्म मोक्षे गजाजिनं भवेत्।
अथवा कम्बलं रक्तं सर्वकर्मसु कारयेत्॥७४॥

भैंस के चमड़े से बने आसन पर मारण मन्त्र का प्रयोग, हाथी के चर्मासन पर मोक्ष प्रदाता मन्त्र का प्रयोग तथा लाल कम्बल के आसन पर बैठकर सभी प्रकार के मन्त्रों का जप किया जा सकता है॥७४॥

षण्मुद्रानिरूपण

षण्मुद्राः क्रमशो ज्ञेयाः पद्मपाशगदाह्वयाः।
मुसलाशनिखड्गाख्याः शांतिकादिषु कर्मसु॥७५॥

छः मुद्रायें

षट्कर्मों के लिए क्रमशः छः मुद्राओं (आसन पर बैठने की अवस्था) को जानना चाहिए। अर्थात् पद्म मुद्रा में शान्ति कर्म, पाश मुद्रा में वशीकरण, गदामुद्रा में स्तम्भन, मुसल मुद्रा में विद्वेषण, वज्र मुद्रा में उच्चाटन तथा खड्ग मुद्रा में मारण कर्म का अनुष्ठान साधकों को करना चाहिए। यह ध्यातव्य है कि तत्तत् मुद्रा में तत्तत् कर्म करने पर सिद्धि निश्चित रूप से प्राप्त होती है॥७५॥

षट्कर्मों का देवध्याननिरूपण

शांतिपौष्टिकवश्येषु सौन्दर्यातिशयान्विताः।
सर्वाभरणसंदीप्ताः प्राप्तकालमनोरथाः॥
ध्यातव्या देवताः सम्यक् सुप्रसन्नाननाम्बुजाः॥७६॥

आकर्षणेऽपि तद्वच्च बडिशैरिव मत्स्यकान्।
साध्यमाकर्षयेद् दूरे भस्यमानं जमैरिव॥७७॥

वध्यमानो जनैर्दण्डैर्दारितस्तस्करो यथा।
उलूको वा यथाऽरिष्टैर्मन्तव्योच्चाटने रिपुः ॥७८॥
यत्किञ्चिच्छवमारुह्य सन्दष्टोष्टपुटः क्रुधा।
कर्म कुर्यात्ततो मन्त्रो यथा क्रूरेषु कर्मसु ॥७९॥

षट्कर्मों के देवताओं का ध्यान

(हे राक्षस राज!) शान्ति, पुष्टि, वशीकरण तथा आकर्षण (मन्त्रों के) प्रयोग के समय देवताओं को अत्यन्त सुन्दर, सम्पूर्ण आभूषणों से अलङ्कृत, नवयौवन सम्पन्न एवं पूर्ण प्रसन्न वदन वाला स्वीकार कर ध्यान करना चाहिए। काँटे से जैसे मछली फँसा ली जाती हैं उसी प्रकार आकर्षण (मन्त्र के प्रयोग) से वाञ्छित व्यक्ति को फँसा लिया जाता है। (जब किसी के ऊपर) आकर्षण और विद्वेषण मन्त्र का प्रयोग करना हो तो वह व्यक्ति लोगों द्वारा भर्त्सना किया जाता हुआ ध्यान किया जाना चाहिए अर्थात् लोग उसकी भर्त्सना (निन्दा) कर रहे हैं—इस प्रकार ध्यान करना चाहिए। किसी के ऊपर उच्चाटन (मन्त्र के प्रयोग) में उस व्यक्ति को बाँधे जाते हुए, लोगों द्वारा चोर (तस्कर) की तरह मारे जाते हुए या दिन में कौवों द्वारा दुःख दिये जाते हुए उल्लू पक्षी के समान ध्यान करना चाहिए। जिस किसी भी शव (मुर्दा) के ऊपर चढ़कर क्रोध से अधरों को काटते हुए के समान सभी मारणादि क्रूर कर्मों में (मन्त्रों का) प्रयोग मन्त्र साधकों को करना चाहिए॥७६-७९॥

षट्कर्मों का कुंडनिर्णय

विद्वेषे चाभिचारे च त्रिकोणं कुंडमिष्यते।
द्विमेखलं कोणमुखं हस्तमात्रं तु सर्वतः ॥८०॥
उच्चाटनं तु नैरृत्यां शत्रुपक्षस्य कारयेत्।
उत्सादनं तु वायव्यां देवानामपि कारयेत् ॥८१॥

षट्कर्मों के कुण्ड

अभिचार और विद्वेषण (मन्त्रों के प्रयोग) में त्रिकोणवाला कुण्ड बनाना चाहिए, इस कुण्ड को दो मेखलाओं से युक्त और सभी ओर से एक हाथ का बनाना चाहिए तथा नैऋत कोण में कुण्ड का मुख करना चाहिए। शत्रुपक्ष के उच्चाटन में कुण्ड नैऋत कोण में तथा देवताओं के उच्चाटन में कुण्ड वायुकोंण में निर्मित करना चाहिए।।८०-८१।।

शत्रूणां तापने शस्तं योन्याख्यमग्निकोणगम् ।
अर्द्धचन्द्रं तु याम्यायां शत्रूणां मारणे स्थितम् ।।८२।।

मण्डल के अग्निकोंण में कुण्ड का निर्माण कर (उसी) योनि कुण्ड में शत्रु को पीड़ित (संतापित) करने के कर्म का अनुष्ठान करना श्रेयस्कर माना गया है। मण्डल के दक्षिण कोण में अर्धचन्द्राकार कुण्ड बनाकर शत्रुमारण कर्म का अनुष्ठान करना चाहिए।।८२।।

त्रिकोणं नैर्ऋते कुंडं रिपूणां व्याधिवर्द्धनम् ।
दाहायाग्नौ च विद्वेषे कुंडं पूर्णेन्दुसन्निभम् ।।८३।।

शत्रु के कष्टवर्धन के लिए मण्डल के नैऋत कोंण में त्रिकोणाकार कुण्ड का निर्माण करना चाहिए तथा विद्वेषण कर्म के लिए मण्डल के अग्नि कोंण में पूर्णचन्द्राकार कुण्ड का निर्माण करना चाहिए।।८३।।

कर्त्तव्यं चतुरस्त्रं वा द्वेषादौ तु विचक्षणैः ।
कुंडं सुलक्षणं कृत्वा तत्र कर्माणि साधयेत।।८४।।

ज्ञानी (तांत्रिक) लोग विद्वेषण आदि कर्मों के लिए चौरस कुण्ड का भी निर्माण करते है। कुण्ड को अत्यन्त सुन्दर ढंग से निर्मित्त कर वहीं कर्म का अनुष्ठान करना चाहिए।।८४।।

चतुरस्त्रे भवेद्वश्यमाकर्षणं त्रिकोणके ।
कर्षणस्तम्भने वत्स विद्वेषं च त्रिकोणके ।।
अथैवोच्चाटनं प्रोक्तं षट्कोणे मारणं स्मृतम् ।।८५।।

हे पुत्र! वशीकरण का प्रयोग चौरस कुण्ड में, आकर्षण, स्तम्भन, विद्वेषण, उच्चाटन का त्रिकोणात्मक कुण्ड में तथा षट्कोणाकार वाले कुण्ड में मारण (मन्त्रों) का अनुष्ठान करना श्रेयस्कर माना गया है॥८५॥

षट्कर्मों की प्रधानता का निरूपण

वश्यात्स्तम्भनमुत्कृष्टं स्तम्भनान्मोहनं महत्।
मोहनाद्द्वेषणं श्रेष्ठं द्वेषादुच्चाटनं वरम् ॥८६॥

षट्कर्मों की प्रधानता

स्तम्भन वशीकरण से उत्कृष्ट. मोहन स्तम्भन से उत्तम, विद्वेषण मोहन से श्रेष्ठ तथा उच्चाटन विद्वेषण से उत्कृष्ट है (माना गया है)॥८६॥

उच्चाटनादपि महन्मारणं सर्वतो महत्।
मारणादधिकं कर्म न भूतं न भविष्यति ॥८७॥

मारण, उच्चाटन कर्म से उत्तम है, अतः मारण कर्म षट्कर्मों में श्रेष्ठतम माना गया है। मारण से उत्तम कर्म आज तक न अन्य कोई कर्म हुआ और न होगा। (अर्थात् मारण कर्म की सर्वोत्कृष्टता हमेशा बनी रहेगी)॥८७॥

षट्कर्मों में कुंभस्थापन

शांतिके स्वर्णकुंभं च नवरत्नैर्विभूषितम्।
तदभावे रौप्यकुंभं ताम्रं वापि सुलक्षणम् ॥८८॥

षट्कर्म में कलश स्थापन

शांति कर्म के प्रयोग में नवरत्नों से सुसज्जित स्वर्णकलश की स्थापना करनी चाहिए। स्वर्ण कलश के अभाव में चाँदी का कलश तथा चाँदी के कलश के अभाव में सुन्दर ताँबें के कलश की साधकों को स्थापना करनी चाहिए॥८८॥

आभिचारे लौहकुंभं स्थापयेत्सुसमाहितः।
उत्सादे काचकुंभं च मोहने रैत्यकुंभकम् ॥८९॥

(हे पुत्र!) अभिचार कर्म के अनुष्ठान में लोहे के कलश की, उत्सादन कर्म के प्रयोग में शीशे के कलश की एवं मोहन कर्म में पीतल के कलश की स्थापना मन्त्रसाधकों को करनी चाहिए।।८९।।

उच्चाटने च मृत्कुंभं कालमंडलसंस्थितम् ।
सर्वकर्माणि वा कुर्यात्कुंभं ताम्रमयं तथा ।।९०।।

उच्चाटन के प्रयोग में कालमण्डल बनाकर उस पर मिट्टी के कलश की और शेष सभी कार्यों में ताम्रनिर्मित घड़े की स्थापना साधकों को करनी चाहिए।।९०।।

कुंभ में पूजन का नियम

तत्कुंभं चाथ संस्थाप्य रुद्रं देवीं च पूजयेत् ।
उपचारक्रमेणैव देवं ध्यायेद्यथाविधि ।।९१।।
शूलहस्तं महारौद्रं सर्ववैरिनिषूदनम् ।
पूर्णचन्द्रसमाभासं रुद्रं वृषभवाहनम् ।।९२।।

कुम्भ में पूजन का विधान

विधि-विधान पूर्वक उस कलश की स्थापना कर विभिन्न उपचारों से यथाविधि रुद्र और देवी (भद्रकाली) की पूजा कर रुद्र देवता का इस प्रकार से ध्यान करना चाहिए कि वे समस्त शत्रुओं का नाश करने वाले, महाक्रोधी स्वरूप धारण किये हुए, पूर्ण चन्द्रमा की तरह प्रकाशमान्, शूल को हाथ में धारण किये हुए बैल पर विराजमान् हैं। (इस प्रकार ध्यान करते हुए उनकी पूजा करनी चाहिए)।

अथवाऽन्यप्रकारेण ध्यानं कुर्यात्समाहितः ।
काश्मीरस्फटिकप्रभं त्रिनयनं पञ्चाननं शूलिनं
खट्वांगासिवरप्रसादडमरूचक्राब्जबीजाभयम् ।।
बिभ्राणं दशदोर्भिरिभजटिलं वीरासने संस्थितं ।।

गौरीश्रीसहितं सदैवमखिलंध्यायेच्छिवंचर्मिणम् ॥९३॥
रुद्रमंत्रेण कुर्याच्च ह्युपचारान्पृथग्विधान् ॥९४॥
भद्रकालीं च संपूज्य नैवेद्यैश्च पृथग्विधैः।
पट्टवस्त्रैरलङ्कारैर्बलिदानैः पृथग्विधैः ॥९५॥

(हे पुत्र!) अथवा समाहित चित्त होकर दूसरे प्रकार से ध्यान करना चाहिए—कश्मीर में उत्पन्न हुए स्फटिक के समान शरीर की चमक है, तीन आँख, पाँच मुख तथा दश हाथ हैं और प्रत्येक हाथ में क्रमशः शूल, खट्वाङ्ग, तलवार, वरमुद्रा, प्रसाद मुद्रा, डमरू, चक्र, कमल, बीज धारण किये हुए एवं अभय मुद्रा में स्थित है, शिर पर जटाओं को धारण किये हुए वीर आसन की मुद्रा में बैठे हुए हैं, उनके एक तरफ गौरी और दूसरी तरफ लक्ष्मी जी विराजित हैं। उपर्युक्त तरीके से शिवजी के स्वरूप का ध्यान करते हुए—'ॐ....... अमृतलाल'—इस रुद्र मन्त्र से पूजन करना चाहिए। बाद में अलग नैवेद्य आदि उपचारों से भद्रकाली की पूजा करनी चाहिए। इन देवी-देवताओं के पूजन में रेशमी वस्त्र, आभूषण और बलिदान (नारियल, नीबू) आदि समस्त उपचार अलग-अलग विधि से प्रदान करना चाहिए॥९३-९५॥

यत्र न स्यादुपायोऽन्यः शत्रोर्भयनिवृत्तये।
तदाऽनन्यगतित्वेन मारणादीनि कारयेत् ॥९६॥

जहाँ शत्रु से भय को दूर करने का कोई दूसरा उपाय न (शेष) हो वहाँ पर मारण कर्म आदि (मन्त्रों) का प्रयोग करना चाहिए॥९६॥

दीपाग्निं समानीय धूपाद्वा चान्त्यजादपि।
विद्वेषणाभिचारे च क्रव्यादांशं न संत्यजेत् ॥९७॥

शत्रु के घर से दीप, अग्नि अथवा धूप लाकर उससे (विद्वेषण, अभिचार कर्म का) प्रयोग करना चाहिए तथा विद्वेषण और अभिचार (के हवन) में (अग्नि के) क्रव्याद अंश का परित्याग नहीं करना चाहिए॥९७॥

अत्र चैव विधायाग्निं परिस्तीर्य शरैस्तृणैः।
विभीतकपरिध्या च कल्पयेद्यस्य मारणम् ॥९८॥
जुहुयान्निम्बतैलाक्तैः काकौलूकैश्च पिच्छकैः।
दारयैनं शोषयैनं मारयेत्यभिधाय च।
अष्टोत्तरशतेनैव मनसा जुहुयादृचा ॥९९॥

(हे रावण!) विधि-विधान से अग्नि की स्थापना कर शरपत के तिनके से अग्नि का परिस्तरण कर पुनः नीम के तेल में डुबोकर कौवे और उल्लू पूँछ से हवन करना चाहिए। जिसके मारण के लिए अनुष्ठान करना है उसी (व्यक्ति) की कल्पना करते हुए अर्थात् उसके स्वरूप का ध्यान करते हुए 'एनं दारय एनं शोषय एनं मारय' मन्त्र का मानसिक उच्चारण करता हुआ १०८ बार हवन करे या हवन की आहुतियाँ देनी चाहिए।।९८-९९।।

होमन्ते विधिवत्कृत्यामाराध्याग्नेश्च सन्निधौ।
यो मे च कंटकं दूराद्दूरं वा चान्तिकेऽपि च।
पिब ह्यद्यमसृक् तस्य इत्युक्त्वा च निवेदयेत् ॥१००॥

हवन के अन्त में अग्नि के पास कृत्या देवी का विधिविधान पूर्वक पूजन करके 'समीप अथवा दूर मेरा जो भी शत्रु है उसके खून का पान करो'—इस प्रकार बोलकर मन्त्र-प्रयोक्ता को निवेदन या प्रार्थना करनी चाहिए।।१००।।

संरक्ष्याग्निं विधानेन नवरात्रैः समापयेत्।
मृतस्तिष्ठति ज्ञात्ववं तामदस्य रिपोमृतिः ॥१०१॥

इस विधि से अग्नि की रक्षा करते हुए नव रात तक (मन्त्र का) जप (तथा) हवन करने पर अनुष्ठान के पूर्ण होते होते शत्रु की मृत्यु हो जाती है।।१०१।।

वसनं लोहितं प्रोक्तमुष्णीषं लोहितं स्मृतम्।
संकल्प्य जपहोमादौ तदाचरणमारभेत् ॥१०२॥

मारण (मन्त्र के) प्रयोग में लाल कपड़ा, लाल पगड़ी धारण करना श्रेयस्कर माना गया है। जप और हवन के पूर्व संकल्प करके ही अनुष्ठान करना चाहिए।।१०२।।

षट्कर्मों की माला का निर्णय

प्रवालवज्रमणिभिर्वश्यपौष्टिकयोर्जपेत् ।
मत्तेभदन्तमणिभिर्ज्जपेदाकृष्टिकर्म्मणि ॥१०३॥

षट्कर्मों में माला का विधान

वशीकरण तता पुष्टिकर्मों के अनुष्ठान में मूँगे की, हीरे अथवा मणिनिर्मित माला से और आकर्षण के प्रयोग में मतवाले हाथी के दाँत से बनी माला से मन्त्र का जप करना चाहिए।।१०३।।

साध्यकेशसूत्रयुक्तैस्तुरंगदशनोद्भवैः ।
अक्षैर्मालां परिष्कृत्य विद्वेषोच्चाटने जपेत् ॥१०४॥

जिस व्यक्ति का विद्वेषण और उच्चाटन करना है, उसके बालों से घोड़े के दाँतों की माला पिरोकर विद्वेषण तथा उच्चाटन कर्म के प्रयोग में मन्त्र का जप करना चाहिए।।१०४।।

मृतस्य युद्धशून्यस्य दशनैर्गर्दभस्य च।
कृत्वाऽक्षमालां जप्तव्यं शत्रुमारणमिच्छता ॥१०५॥

शत्रु को मारने की कामना से बिना युद्ध के मरे हुए मनुष्य के दाँतों की माला अथवा गदहे के दाँत की बनी माला से (मारण के प्रयोग में) मन्त्र का जप करना चाहिए।।१०५।।

क्रियते शंखमणिभिर्धर्मकामार्थसिद्धये ।
पद्माक्षैः प्रजपेन्मंत्रं सर्वकामार्थसिद्धये ॥१०६॥

(हे रावण!) शंख तथा मणि निर्मित माला से धर्म, काम तथा अर्थ की सिद्धि के लिए (मन्त्रों का) जप करना चाहिए तथा कमल गट्टे की बनी माला से सम्पूर्ण कार्यों की सिद्धि करने के लिए (मन्त्रों का) जप करना चाहिए।।१०६।।

रुद्राक्षमालया जप्तो मन्त्रः सर्वफलप्रदः।
स्फाटिकी मौक्तिकी वापि रौद्राक्षी वा प्रवालजा।
सारस्वताप्तये शस्ता पुत्रजीवैस्तथाप्तये ।।१०७।।

रुद्राक्ष की माला से मन्त्रों का जप करने से सभी प्रकार के फलों की प्राप्ति होती है। विद्या प्राप्ति के अभिलाषी व्यक्ति को स्फटिक की माला, मोतियों की माला, रुद्राक्ष की माला, मूँगे की माला और पुत्रजीवा की माला से (मन्त्रों का) जप करना चाहिए।।१०७।।

पद्मसूत्रकृता रज्जुः शस्ता शान्तिकपौष्टिके।
आकृष्ट्युच्चाटयोर्वाजिपुच्छवालसमुद्भवा ।।१०८।।

शान्ति तथा पुष्टि कर्म में कमल के धागे से, आकर्षण और उच्चाटन कर्म में घोड़े की पूँछ के बालों से माला पिरोनी चाहिए।।१०८।।

नरस्नायुविशेषैस्तु मारणे रज्जुरुत्तमा।
अन्यासां चाक्षमालानां रज्जुः कार्पासिकी मता ।।१०९।।

मारण के अनुष्ठान में मनुष्य की नसों (स्नायु) से तथा दूसरे कर्मों में कपास के धागे से साधकों को माला पिरोनी चाहिए।।१०९।।

सप्तविंशतिसंख्याकैः कृता मुक्तिं प्रयच्छति।
अक्षैस्तु पंचदशभिरभिचारफलप्रदा ।।११०।।

(हे वत्स!) मोक्षेच्छु व्यक्तियों को सत्ताइस दानों (मनकों) वाली माला से जप करना चाहिए। अभिचार कर्मों के अनुष्ठान में पन्द्रह मनकों वाली माला फल प्रदान करने वाली होती है।।११०।।

अक्षमाला विनिर्दिष्टा तत्रादौ तत्त्वदर्शिभिः।
अष्टोत्तरशतेनैव सर्वकर्मसु पूजिता ॥१११॥

समस्त तांत्रिक कर्मों के अनुष्ठान में तत्त्व को समझाने वाले (ऋषियों अर्थात् तांत्रिकों ने) एक सौ आठ दानों की माला से जप करना श्रेयस्कर माना है॥१११॥

जपांगुलीनियम

शान्त्यादिस्तंभवश्येषु वृद्धाग्रेण च चालयेत्।
अंगुष्ठानामिकाभ्यां तु जपेदाकर्षणे मन्त्रम् ॥११२॥
अंगुष्ठतर्जनीभ्यां तु विद्वेषोच्चाटयोर्जपेत्।
कनिष्ठांगुष्ठयोगेन मारणे जप ईरितः ॥११३॥

जप में अङ्गुली का विधान

(हे रावण!) शान्ति, पुष्टि, स्तम्भन तथा वशीकरण (के प्रयोग) में अंगूठे के आगे के भाग से माला चलानी चाहिए (अर्थात् मन्त्र का जप करना चाहिए), अंगूठे तथा अनामिका अंगुली (Ring finger) का प्रयोग आकर्षण में मन्त्रों का जप करते समय माला चलाने में करना चाहिए। विद्वेषण और उच्चाटन में अंगूठे और तर्जनी (Thumb and Pointer finger) अंगुली का प्रयोग माला जपते समय करना चाहिए और मारण कर्म में अंगूठे एवं कनिष्ठिका अंगुली (Thumb and small finger) से जप करना श्रेयस्कर माना गया है॥११२-११३॥

जप करने में दिशाओं का नियम

जपेत्पूर्वमुखो वश्ये दक्षिणां चाभिचारके।
आयुष्यरक्षाशान्तिं च पुष्टिं वापि करिष्यति ॥११४॥

जप में दिशा विधान

(हे लङ्केश!) वशीकरण कर्म के प्रयोग में पूर्व दिशा में मुख करके, अभिचार अर्थात् मारण, उच्चाटन आदि में दक्षिण दिशा में मुख करके, धन की कामना से पश्चिम दिशा में मुख करके, आयु के रक्षणार्थ तथा शांति एवं पुष्टि कर्मों में उत्तराभिमुख होकर साधकों को (मन्त्रों का) जप करना चाहिए।।११४।।

जप के लक्षण

यः श्रूयतेऽन्यैर्स तु वाचिकः स्यादुपांशुसंज्ञो निजदेहवेद्यः ।
निष्कंपदन्तौष्ठमथाक्षराणांयच्चिन्तनं स्यादिहमानसाख्यः ॥११५॥

जप के लक्षण

(हे वत्स!) जप करते समय मन्त्र का स्पष्ट उच्चारण जो दूसरे व्यक्ति द्वारा सुना जा सके वह 'वाचिक', जो मन्त्र केवल स्वयं को सुनाई पड़ सके वह 'उपांशु' तथा जिसमें अधर और जिह्वा न हिले, केवल मन में ध्यान करते हुए जप करे, वह 'मानसिक जप' कहलाता है। इस प्रकार जप के तीन भेद है—वाचिक, उपांशु तथा मानसिक।।११५।।

षट्कर्मों के जप का नियम

पराभिचारे किल वाचिकः स्या-
दुपांशुरुक्तोऽप्यथ शान्तिपुष्टौ ।
मोक्षेषु जापः किल् मानसाख्यः
संज्ञा त्रिधा पापनुदे तथोक्ता ॥११६॥

षट्कर्मों के जप का विधान

दूसरों पर अभिचार अर्थात् मारणोच्चाटनादि कर्मों में वाचिक, शांति एवं पुष्टि कर्म में उपांशु एवं मोक्ष प्राप्ति की साधना में मानसिक जप[१] करना चाहिए। पापों के नाश के लिए उपर्युक्त तीन प्रकार की संज्ञाओं वाले जप का नियम (ऋषियों के) द्वारा बताया गया है।।११६।।

षट्कर्मों के होमकुंड की दिशा का नियम

शांतिके पौष्टिके चैव होमः स्याद्योग्यसाधनैः।
कार्यं प्राग्वदनेनाथ सौम्येन वदनेन वा॥११७॥

षट्कर्मों में हवन कुण्ड की दिशा

शांति और पुष्टि कर्म में हवन योग्य अर्थात् शास्त्रोक्त साधनों से साधकों को पूर्व अथवा उत्तराभिमुख होकर (प्रसन्नता) के साथ करना चाहिए॥११७॥

आकृष्टौ वायुकुण्डे च कौबेरदिङ्मुखेन तु।
नैऋतीदिङ्मुखस्तस्मिन्कुण्डे विद्वेषणे हुनेत्॥११८॥

आकर्षण के अनुष्ठान में उत्तराभिमुख होकर वायुकोण में स्थित कुण्ड में तथा विद्वेषण कर्म में नैऋत दिशा में मुख करके उसी वायुकोण में स्थित कुण्ड में साधकों को हवन करना चाहिए॥११८॥

---

१. जप में विशेष नियम यह है कि बिना सेतु के जप न करे, कालिकापुराण में लिखा हैं—'शास्त्राणां प्रणवः सेतुर्मंत्राणां प्रणवः स्मृतः।

स्रवत्यनोंकृतः पूर्वं परस्ताच्च विशीर्यते॥
निःसेतुसलिलं यद्वत्क्षणान्निम्नं प्रगच्छति।
मंत्रस्तथैव निःसेतुः क्षणात्क्षरति यज्वनाम्॥
चतुर्दशः स्वरो योऽसौ सेतुरोंकारसंज्ञकः।
स चानुस्वारनादाभ्यां शूद्राणां सेतुरुच्यते'॥

सब प्रकार के मन्त्रों का 'प्रणव' सेतु है। यदि ओंकाररूपी सेतु जप के आदि में न हो तो वह जप पतित हो जाता है और—अन्त में सेतु के न रहने से मंत्र विशीर्ण हो जाता है। अतएव जप के आदि में और अन्त में सेतु को जपना चाहिए। जैसे बिना सेतु के (पुल के) जल नीचे चला जाता है उसी भाँति सेतुशुन्य मंत्र भी विफल होता है। स्वर वर्ण के १४ चौदहवें अक्षर में नादबिन्दु मिलाने से 'औं' बीज होता है, इसको शूद्रों का सेतु कहते हैं।

आग्नेयीदिङ्मुखस्वेतत्कुण्डे मारुतकेऽपि वा।
उच्चाटने हुनेन्मंत्री मारणे याम्यदिङ्मुखः॥
जुहुद्याम्यकुण्डे तु मंत्री तत्साधनैस्ततः॥११९॥

उच्चाटन कर्म में अग्निकोण में मुख करके उसी कुण्ड अथवा वायुकोण में स्थित कुण्ड में मन्त्र साधक को हवन करना चाहिए तथा मारण के प्रयोग में दक्षिण दिशा में मुख करके दक्षिण दिशा में स्थित कुण्ड में शास्त्रोक्त साधनों से मन्त्र साधकों को हवन करना चाहिए।।११९।।

वज्रलाञ्छितकुण्डे वा ग्रहभूतनिवारणे।
वायव्यदिङ्मुखो वश्ये कुण्डे योन्याकृतौ हुनेत्॥
वज्रलाञ्छितकुण्डे वा स्तम्भेप्राग्वदनो हुनेत्॥१२०॥

(हे पुत्र!) ग्रहभूतादिजन्य अरिष्ट निवारण के लिए वायुकोंण में मुख करके वज्रलाञ्छित अर्थात् षट्कोंणाकार कुण्ड में हवन करना चाहिए। वशीकरण के प्रयोग में योनि के आकार वाले अर्थात् त्रिकोंणाकार कुण्ड में हवन करना चाहिए। स्तम्भन के अनुष्ठान में भी पूर्वाभिमुख होकर षट्कोंणाकार कुण्ड में (मन्त्र की साधना करने वाले लोगों को) हवन करना चाहिए।।१२०।।

षट्कर्मों के हवन में द्रव्यों का निरूपण

द्रव्याण्यथ प्रवक्ष्यामि तत्तत्कर्मानुसारतः।
शांतिके तु पयः सर्पिस्तिलाः क्षीरद्रुमेण वा॥
अमृताख्या लता चैव पायसं तत्र कीर्तितम्॥१२१॥

षट्कर्मों में हवन द्रव्यों का विधान

(हे रावण! तुम्हें मैं) अब तत्तत् कर्मों के अनुसार हवन सामग्रियों को बता रहा हूँ। शांति कर्म में दूध, घी, तिल, पीपल के पत्ते, अमृतलता (गिलोय, गुरुचि) तथा खीर से हवन करना ही शास्त्र सम्मत है।।१२१।।

पौष्टिके तु प्रवक्ष्यामि होमद्रव्याण्यतः परम्।
बिल्वपत्रैस्तथाऽऽज्यैः स्याज्जातीपुष्पैस्तथैव च ॥१२२॥

अब पुष्टि कर्म में प्रयुक्त होने वाली हवन सामग्री को बताने जा रहा हूँ। बेल के पत्ते, घी तथा जातीपुष्प अर्थात् चमेली के फूलों से पुष्टि कर्म के अनुष्ठान में (तन्त्रविद्या के साधकों को) हवन करना चाहिए॥१२२॥

कन्यार्थी जुहुयाल्लाजैः श्रीकामः कमलैस्तथा।
दध्ना च श्रियमाप्नोति चान्नैश्चान्नं घृतप्लुतैः॥
समृद्धौ जुहुयान्मंत्री महादारिद्र्यशान्तये ॥१२३॥

कन्या की कामना में लाज से अर्थात् खीलों से, सुन्दर (स्त्री की कामना में) कमलों से, महासमृद्धि अर्थात् अत्यन्त धनवान बनने तथा महादरिद्रता को दूर करने के लिए दही तथा घी में सने हुए अन्नों (जव, चावल आदि) से मन्त्र साधकों को हवन करना चाहिए॥१२३॥

लक्षहोमाल्लभेच्छान्तिं घृतबिल्वतिलैर्निधिम्॥

घृत, बेल और तिल से एक लाख मन्त्रों से एक लाख आहुति देने पर शान्ति और महानिधि (विपुल धन सम्पत्ति) की प्राप्ति होती है॥

'आकर्षणे च हवनं प्रियंगु बिल्वकं फलम्।
जातीपलाशकुसुमैः सैन्धवैस्त्र्यहमेव च' ॥१२४॥

आकर्षण मन्त्र के अनुष्ठान में प्रियंगु लता, बेल, चमेली के फूल, पलाश अर्थात् ढाँख के फूल तथा सैन्धव अर्थात् सेंधा नमक से तीन दिनों तक (मन्त्र साधकों को) हवन करना चाहिए॥१२४॥

राजिकालवणैर्वापि वश्ये वा पौष्टिकादिषु।
वश्यार्थी जातिकुसुमैराकृष्टौ करवीरजैः ॥१२५॥

वश में करने के अभिलाषी व्यक्ति को चमेली के फूल से, आकर्षण के प्रयोग में व्यक्ति को करबीर के फूल (कनेर, कण्डेल के फूल) से और सफेद सरसों और नमक से पुष्टि कर्म में साधकों को हवन करना चाहिए॥१२५॥

कार्पासनिम्बैस्तक्राक्तैः साध्यकेशैरथापि वा।
उच्चाटने काकपक्षैरथवा मोहने पुनः ॥१२६॥

उच्चाटन कर्म में जिस व्यक्ति का उच्चाटन करना है उसके बालों अथवा कपास के बीज और नीम के बीज को मट्ठे में मिलाकर तथा मोहन कर्म के प्रयोग में मन्त्र साधकों को कौवे के पंखों से हवन करना चाहिए॥१२६॥

उन्मत्तबीजैर्जुहुयाद्विषरक्तेन मारणम् ॥१२७॥

धतूरे के बीज और खून में मिलाये गये विष से मारण कर्म के अनुष्ठान में साधकों को हवन करना चाहिए॥१२७॥

अजापयस्तथा सर्पिः कार्पासास्थि नृणामपि।
तन्मांसं चापि साध्यस्य नखलोमगणैरपि॥
एकीकृत्य हुनेन्मन्त्री शत्रुमारणकांक्षया ॥१२८॥

बकरी का दूध, घृत, कपास का बीज, मनुष्य की अस्थि, मानव मांस तथा जिसके ऊपर मारण का प्रयोग करना है उसके नाखून और रोयें को मिलाकर मारण की कामना से मन्त्र साधक व्यक्ति को हवन करना चाहिए॥१२८॥

जुहुयात्सार्षपैस्तैलैरथवा शत्रुमारणे ॥१२९॥

अथवा शत्रु को मारने में सरसों के तेल से हवन किया जा सकता है॥१२९॥

रोहीबीजैस्तिलोपेतैरुत्सादे जुहुयाद्यवैः ॥१३०॥

उत्सादन कर्म के अनुष्ठान में मनुष्य को रोहितक बीज, तिल और जौ को मिलाकर हवन करना चाहिए॥१३०॥

तुषकण्टकसंयुक्तैर्बीजैः कार्पासकैरपि।
सर्षपैर्लवणाक्तैश्च हुनेत्सर्वाभिचारके ॥१३१॥

(अभिचार कर्म के अनुष्ठान के इच्छुक साधक लोगों को) सभी प्रकार के अभिचार कर्म में भूसी और काँटे सहित कपास के बीज, सरसों तथा नमक से हवन करना चाहिए।।१३१।।

काकोलूकच्छदैः क्रूरैः कारस्करविभीतकैः।
मरीचैः सर्षपैः सिक्थैरर्कक्षीरैः कटुत्रयैः।।
कटुतैलैः स्नुहीक्षीरैः कुर्यान्मारणकर्मणिः।।१३२।।

कौवा, उल्लू आदि क्रूर पक्षियों के पंख, कुचिला, विभीतक मिर्च, सरसों, सिक्थ (उबाले गये चावल के पिण्ड), अर्क (मदार) का दूध, कटुत्रय अर्थात् (सोंठ, मिर्च), पीपर, कड़वा तेल तथा सेहुंड के दूध से मारण कर्म में व्यक्ति को हवन करना चाहिए।।१३२।।

आयुष्कामे घृततिलैदूर्वाभिराम्रपर्णकैः।।१३३।।

आयु वृद्धि की कामना से घी, तिल, दूब और आम के पत्तों से हवन करना चाहिए।।१३३।।

प्रयुक्तैराम्रपर्णैश्च ज्वरं सद्यो विनाशयेत्।
गुडूच्या मृत्युजयने तथा शान्तौ गजाश्वयोः।।१३४।।

ज्वर (बुखार) के शीघ्र नाश के लिए आम के पत्तों से हवन करना चाहिए। मृत्यु पर विजय प्राप्त करने के लिए तथा घोड़े और हाथी की शान्ति के लिए गुरुचि (गिलोय) से (साधक को) हवन करना चाहिए।।१३४।।

गौरैस्तु सर्षपैर्हुत्वा सद्यो रोगं हरेद्गवाम्।
वृष्टिकामोवैतसीभिः समिद्भिः पत्रकैस्तथा।।१३५।।

श्वेत सरसों से हवन करने पर गायों के रोग पीड़ा शीघ्र ही दूर हो जाते है। वृष्टि की अर्थात् वर्षा की कामना में बेंत की समिधा (अर्थात लकड़ी) और बेंत के पत्तों से (साधक मनुष्य को) हवन करना चाहिए।।१३५।।

हुत्वा पुष्टिमवाप्नोति पुत्रजीवैस्तु पुत्रकम् ।
घृतगुग्गुलहोमेन वाक्पतित्वं प्रजायते ॥१३६॥

(हे वत्स!) पुत्र जीवा की समिधा से हवन करने पर पुष्टि और पुत्र की प्राप्ति होती है। घृत और गुग्गुल से हवन करने पर वाक्पतित्व उत्पन्न होता है, अर्थात् घी और गुग्गुल से हवन करने वाला व्यक्ति श्रेष्ठ वक्ता बन जाता है॥१३६॥

पुन्नागमल्लिकाजातीनागविद्रुमसम्भवैः ।
पुष्पैः सरस्वतीसिद्धिस्तथा सर्वार्थसाधनम् ॥१३७॥

पुन्नाग, मल्लिका, जाती (पुष्प) तथा नागकेशर के पुष्प और मूँगे से हवन करने पर सरस्वती के साथ सभी प्रयोजन अथवा मनोरथ सिद्ध हो जाते हैं, अर्थात् उपर्युक्त प्रकार से हवन करने वाले व्यक्ति की सभी मनोकामनायें सिद्ध हो जाती हैं और वह विद्वान् बन जाता है॥१३७॥

पयसा लवणैर्वापि हुनेद् वृष्टिनिवारणे ॥१३८॥

(जब भयंकर वर्षा हो रही हो, सर्वत्र जल ही जल दिखाई दे रहा हो तथा वर्षा रुक न रही हो तब) दूध और नमक से हवन करने पर वर्षा रुक जाती है अर्थात् शान्त हो जाती है॥१३८॥

वह्नि की जिह्वा का निरूपण

पद्मरागासुवर्णाख्या तृतीया भद्रलोहिता ।
लोहिताऽनन्तरं श्वेता धूमिनी च करालिका ॥
राजस्यो रसना वह्नेर्विहिताः काम्यकर्मसु ॥१३९॥

अग्नि-जिह्वा का वर्णन

पद्मरागा, सुवर्णा, भद्रलोहिता, लोहिता, श्वेता, धूमिनी और करालिका अग्नि की राजसी जिह्वायें मानी गयी हैं। काम्य कर्म में इन्हीं की आवश्यकता पड़ती है॥१३९॥

विश्वमूर्तिस्फुलिङ्गिन्यौ धूम्रवर्णा मनोजवा ।
लोहिताख्या करालाख्या काली तामस्य ईरिताः ॥
एताः सप्त नियुञ्जन्ति क्रूरकर्मसु मन्त्रिणः ॥१४०॥

विश्वमूर्ति, स्फुलिङ्गिनी, धूम्रवर्णा, मनोजवा, लोहिता, कराला और काली अग्नि की सात तामसी जिह्वायें मानी गयी हैं, (मारणादि) क्रूर कर्मों के मन्त्रों के अनुष्ठान में इन्हीं की आवश्यकता होती है॥१४०॥

हिरण्या गगना रक्ता कृष्णाऽन्या सुप्रभा मता ।
बहुरूपाऽतिरक्ता च सांत्त्विक्योर्योगकर्मसु ॥१४१॥

हिरण्या, गगना, रक्ता, कृष्णा, सुप्रभा, बहुरूपा और अतिरिक्ता अग्नि की सात्विक जिह्वायें स्वीकार की गयी हैं। योगकर्मों में इनकी आवश्यकता पड़ती है॥१४१॥

स्वस्वनामसमाभाः स्युर्जिह्वाः कनकरेतसः ॥१४२॥

(साधक मनुष्यों को) अपने-अपने नाम के अनुसार जिह्वाओं के रंग (रूप) का निर्धारण कर लेना चाहिए। जैसे—सुवर्णा–सोने के रंग के समान, रेतस अर्थात् चाँदी के रंग के समान, धूम्रवर्णा–धूयें के रंग के समान। इसी प्रकार अन्य को भी समझना चाहिए॥१४२॥

संन्यस्या रुद्रभागे द्रुतकनकनिभाऽऽकर्षणादौ हिरण्या
वैदूर्य्या पूर्वभागे प्रभवति गगना स्तम्भनादौ रसज्ञा ॥
रक्ता बालार्कवर्णा हुतवहविदिशि द्वेषणादौ प्रशस्ता
कृष्णानीलाम्बुजाभादिशि दनुजपतेर्मारणे सुप्रशस्ता ॥१४३॥

वारुण्यां सुप्रभाख्या प्रभवति रसना शान्तिके शोणवर्णा
हेमाभा चातिरक्ता पवनदिशि गतोच्चाटने संप्रशस्ता ॥
मध्ये कुंडस्य चान्ते प्रभवति बहुरूपा यथार्थाभिमाना
एता जिह्वाः प्रयोज्या विविधविधिषु यत्कोविदैस्तंत्रविद्भिः ॥१४४॥

(हे रावण!) आकर्षण कर्म के अनुष्ठान में ईशान कोण में अग्नि की स्वर्णकान्तिसम्पन्न हिरण्या नामवाली जिह्वा की आवश्यकता होती है। स्तम्भन के प्रयोग में पूरब में नीलकान्तमणि के सदृश नीली आभावाली अग्नि की जिह्वा की आवश्यकता पड़ती है। अग्नि कोंण में उदय होते हुए सूर्य के रंग के समान रक्ता नामक जिह्वा का विद्वेषण मन्त्रों के अनुष्ठान में प्रयोग श्रेयस्कर माना गया है। नैऋत कोंण में नीलकमल के सदृश वर्णवाली अग्नि की कृष्णा नामक जिह्वा मारण मन्त्रों के प्रयोग में श्रेयस्कर बताई गयी है। पश्चिम में लोहित वर्णा अग्नि की सुप्रभा नामक जिह्वा शान्तिकर्म के प्रयोग में श्रेष्ठ मानी गई है। वायुकोंण में मन्त्रों के स्वर्णवर्णा अग्नि की अतिरिक्ता नामक जिह्वा उच्चाटन के प्रयोग में श्रेष्ठ बतलाई गयी है। कुण्ड के बीच में तथा अन्त में अग्नि की जो बहुरूपा नामक जिह्वा है उसमें हवन करने से अर्थ की प्राप्ति होती है। तन्त्र के ज्ञाता मनीषियों ने अग्नि की जो ये (उपर्युक्त) जिह्वाओं को बताया है साधकों को उनका विभिन्न प्रकार के कर्मों में प्रयोग करना चाहिए।।१४३-१४४।।

वह्नि के नामनिरूपण

पूर्णाहुत्यां मृडो नाम शान्तिके वरदस्तथा।
पौष्टिके बलदश्चैव क्रोधोऽग्निश्चाभिचारके ।।१४५।।
वश्यार्थे कामदो नाम वरदाने च चूडकः।
लक्षहोमे वह्निनामा कोटिहोमे हुताशनः ।।१४६।।

अग्नि के अभिधान

पूर्णाहुति में अग्नि का नाम मृड, शान्तिकर्म में वरद, पुष्टिकर्म में बलद, अभिचार कर्मों में क्रोध, वशीकरण में कामद, वरदान में चूडक, एक लाख संख्या के हवन में वह्नि तथा एक करोड़ की संख्या के हवन में अग्नि के हुताशन नाम का उच्चारण कर (साधकों को) अनुष्ठान सम्पन्न करना चाहिए।।१४५-१४६।।

होम की व्यवस्था

द्रव्याशक्तौ घृतं होमे त्वशक्तौ सर्वतो जपेत्।
मूलमंत्राद्दशांशः स्यादंगादीनां जपक्रिया ॥१४७॥

हवन का विधान

(हे वत्स!) (मनुष्यों को) हवन सामग्री का अभाव होने पर घृतमात्र से हवन करना चाहिए, घृत के भी न मिलने पर केवल जप करना चाहिए। मुख्य देवता का जितनी संख्या में व्यक्ति मन्त्र का जप करे तो उसका दसवाँ अंश से अंग देवता का जप करना चाहिए॥१४७॥

अशक्तावुक्तहोमस्य जपस्तु द्विगुणो मतः ॥१४८॥
येषां जपे च होमे च संख्या नोक्ता मनीषिभिः।
तेषामष्टसहस्राणि संख्योक्ता जपहोमयोः ॥१४९॥

घृत से हवन करने में असमर्थ होने पर मंत्र की संख्या का दोगुना जप कर देना चाहिए। जहाँ मन्त्र के जप तथा हवन में आहुतियों की संख्या निर्धारित न हो वहाँ आठ हजार मन्त्र का जप तथा आठ हजार आहुतियों से (साधक व्यक्ति को) हवन करना चाहिए॥१४८-१४९॥

स्वाहान्तेनैव मंत्रेण कुर्याद्धोमं बलिं तथा।
नमोऽन्तेन नमस्कारमर्चनं च समाचरेत् ॥१५०॥

हवन तथा बलिकर्म में मन्त्र के अन्त में (व्यक्ति को) 'स्वाहा' बोलना चाहिए, पूजन-अर्चन तथा 'प्रणाम' करने के समय 'नमः' बोलना चाहिए॥१५०॥

मन्त्रान्ते नाम संयोज्य तर्पयामीति तर्पयामीति तर्पणम्।
संख्यानुक्तौ जपे होमे चाष्टोत्तरसहस्रकम् ॥१५१॥

तर्पण कर्म करते समय, देवता का नाम बोलते समय मन्त्र के अन्त में तर्पयामि कहना चाहिए। जहाँ मन्त्र के जप तथा हवन की आहुतियों की

संख्या का विधान न किया गया हो वहाँ एक हजार आठबार मन्त्र का जप तथा उतनी ही संख्या में (व्यक्ति को) हवन में आहुति देनी चाहिए।।१५१।।

स्रुक्स्रुवनियम

षद्त्रिंशदंगुला स्रुक् स्याच्चतुर्विंशांगुलः स्रुवः ।
मुखं कण्ठं तथा वेदीं सप्त चैकाष्टभिः क्रमात् ।।१५२।।

स्रुक्स्रुवा का विधान

छत्तिस अंगुल का स्रुक तथा चौबीस अंगुल के बराबर स्रुवा का निर्माण करना चाहिए। सात अंगुल का मुख, एक अँगुल का कण्ठ (गला) तथा आठ अंगुल की वेदी (साधक व्यक्ति को) बनानी चाहिए।।१५२।।

आयामानाहतो दण्डो विंशतिश्च षडङ्गुलः ।।१५३।।

दण्ड की लम्बाई २० अंगुल तथा मोटाई ६ अंगुल की होनी चाहिए।।१५३।।

वेदरामांगुलैः कुण्डो गर्त्तो हि चतुरंगुलः ।
खातं वेदांगुलैर्वृत्तमंगुलत्रितयं खनेत् ।।१५४।।

स्रुक और स्रुव दोनों के कुण्ड का भाग चार अथवा तीन अंगुल का बनाकर उसमें चारों ओर गड्ढा बनाना चाहिए, गड्ढा एक अंगुल गहरा तथा वर्तुलाकार होना चाहिए।।१५४।।

मेखला द्व्यंगुला तद्वच्छोभाशेषं विचिन्तयेत् ।
वेदित्र्यंशेन विस्तारं कुर्यात्कुण्डमुखाग्रयोः ।।१५५।।

(साधना करने वाले मनुष्य को) गड्ढे के बाहर दो अंगुल की मेखला, उसके बाहर शोभा विशेष (रंग-बिरंगा-सुन्दर) बनाकर कुण्डमुख तथा कुण्ड का अग्रभाग वेदी की आकृति का तीन गुना बनाना चाहिए।।१५५।।

कनिष्ठाग्रमितं रन्ध्रं स्रुवो घृतविनिर्गमे ।।१५६।।

स्त्रुक तथा स्त्रुव के अग्रभाग में कनिष्ठिका अंगुली (Lady finger) के आगे के भाग के बराबर घृत निकलने के लिए छिद्र बनाना चाहिए।।१५६।।

सुवर्णरूप्यताम्रैर्वा स्त्रुक्स्त्रुवौ दारुजावपि।
आयसीयौ स्त्रुक्स्त्रुवौ वा कारस्करमयावपि ।।१५७।।

(साधक को) स्त्रुक और स्त्रुव सोना, चाँदी, आम की लकड़ी, देवदार की लकड़ी, ताँबा अथवा लोहे का बनाना चाहिए अर्थात् (साधक मनुष्य को) उपर्युक्त लकड़ियों में से किसी एक का स्त्रुकू और स्त्रुव बनाना चाहिए।।१५७।।

नागेन्द्रलतयोर्विंद्यात्क्षुद्रकर्मणि संस्थिते ।।१५८।।

क्षुद्र अर्थात् छोटे-मोटे कर्मों में (साधना करने वाले मनुष्य को) नागेन्द्र लता का स्त्रुक तथा स्त्रुव बनाना चाहिए।।१५८।।

होम की मुद्रावर्णन

न देवाः प्रतिगृह्णन्ति मुद्राहीनां यथाऽऽहुतिम्।
मुद्रयैवेति होतव्यं मुद्राहीनं न भोक्ष्यति ।।१५९।।

हवन की मुद्रा

(हे वत्स!) बिना मुद्रा के हवन कर्म में आहुतियाँ देने पर देवता गण उसको ग्रहण नहीं करते हैं, इसलिए साधक को मुद्रा सहित हवन कर्म (आहुतियाँ डालनी) करना चाहिए।।१५९।।

मुद्राहीनं च यो मोहाद्धोममिच्छति मन्दधीः।
यजमानं स चात्मानं पातयेत्तेन निश्चितम् ।।१६०।।

(हे रावण) जो मूर्ख व्यक्ति मोह के कारण बिना मुद्रा के हवन कर्म में आहुतियाँ डालता है वह स्वयं को तथा यजमान को (पाप से युक्त बनाता है) अर्थात् पतित करता है।।१६०।।

तिस्त्रो मुद्राः स्मृता होमे मृगी हंसी च शूकरी ।
शूकरी करसंकोची हंसी मुक्तकनिष्ठिका ॥
मृगी कनिष्ठातर्जन्योर्होममुद्रेयमीरिता ॥१६१॥

हवन कर्म के लिए तीन मुद्रायें बतलाई गयी हैं—मृगी, हंसी और शूकरी। हाथ को सिकोड़ लेने पर शूकरी मुद्रा, कनिष्ठिका को छोड़ शेष सभी अङ्गुलियों में हंसी मुद्रा तथा कनिष्ठिका और तर्जनी अङ्गुलियों में मृगी मुद्रा, (होम मुद्रा) बतलाई गयी है॥१६१॥

आभिचारिककार्येषु शूकरी परिकीर्त्तिता ॥१६२॥

अभिचार अर्थात् मारणोच्चाटनादि कर्मों के अनुष्ठान में शूकरी मुद्रा श्रेयस्कर मानी गयी है॥१६२॥

नमःस्वाहावषट्वौषट्हुंफडन्ताश्च जातयः ।
शान्तौ वश्ये तथा स्तम्भे विद्वेषोच्चाटनमारणे ॥१६३॥

शान्ति कर्मों के प्रयोग में नमः, वशीकरण में स्वाहा, स्तम्भन में वषट्, विद्वेषण में वौषट्, उच्चाटन में हुं तथा मारण मन्त्रों के अनुष्ठान में मन्त्रों के अन्त में फट् शब्द का उच्चारण करके साधक मनुष्य को हवन में आहुति डालनी चाहिए॥१६३॥

अथ शान्तिकर्म

ज्वरादिशान्ति

अथ शान्तिकर्म

ज्वर आदि की शान्ति

ॐशान्ते शान्ते सर्वारिष्टनाशिनि स्वाहा ।
एकलक्षजपेनापि सर्वारिष्टनाशिनि स्वाहा ॥१६४॥

'ॐ शान्ति शान्ति सर्वारिष्टनाशिनि स्वाहा'—इस मंत्र से एक लाख जप करने पर बुखार आदि सम्पूर्ण रोग निश्चित रूप से दूर हो जाते है।।१६४।।

कुकृत्ययशान्ति

'ॐ संसांसिंसींसुंसूंसेंसैंसोंसौंसंसः वंवांविंवींवुंवूंवेंवैंवोंवौंवंवः हंसः अमृतवर्च्चसे स्वाहा।' इति मन्त्रः।।

अनेन मन्त्रेण उदकशरावं अष्टोत्तरशताभिमन्त्रितं पिबेत्, प्रातरुत्थाय सर्वव्याधिरहितः संवत्सरेण भविष्यति।।१६५।।

कुकृत्य की शान्ति

'ॐ संसांसिंसींसुंसूंसेंसैंसोंसौंसंसः वंवांविंवींवुंवूंवेंवैंवोंवौंवंवः हंसः अमृतवर्च्चसे स्वाहा'—इस मंत्र से एक (सुराही) शरावे में पानी भरकर उपयुर्क्त मन्त्र से एक सौ आठ बार जल को अभिमंत्रित कर (अर्थात् मंत्र पढ़कर जल पर फूँक मारना चाहिए) प्रातः उठकर पीने से व्यक्ति सम्पूर्ण रोगों से मुक्त हो जाता है, उसके बुरे कर्मों का नाश हो जाता है तथा किसी नीच-दुष्ट आदमी द्वारा किया गये प्रयोग का उस पर कोई भी प्रभाव नहीं पड़ता है।।१६५।।

विविध आपच्छान्ति

'ॐहंहांहिंहींहुंहूंहेंहैंहोंहौंहंहः क्षंक्षांक्षिंक्षींक्षुंक्षूंक्षोंक्षौंक्षंक्षः हंसः हम्।' इति मन्त्रः।।

मंत्रेणानेन दुष्टस्य चरितं संप्रणश्यति।
स्थावरं जङ्गमं चैव कृत्रिमं विषमेव च।।
भूतप्रेतपिशाचाश्च राक्षसा दुष्टचेतसः।।१६६।।
नराश्च व्याघ्रसिंहाद्या भल्लुका जम्बुकास्तथा।
नागा गजा हयाश्चैव सर्वे पशव एव च।।१६७।।

नश्यन्ति स्मृतिमात्रेण ये केचिद्भूतविग्रहाः ।
सर्वे ते प्रलयं यान्ति मन्त्रस्यास्य प्रभावतः ॥१६८॥

अनेक विपत्तियों की शान्ति

'ॐ हंहांहिंहींहुंहूंहेंहैंहोंहौंहंहः क्षंक्षांक्षिंक्षींक्षुंक्षूंक्षोंक्षौंक्षंक्षः हंसः हम्'—इस मन्त्र का स्मरण अथवा जप करने से दुष्टों का चरित नष्ट हो जाता है, सभी प्रकार की विपत्तियाँ दूर हो जाती है। इस मन्त्र के प्रभाव से भूत, प्रेत, पिशाच, राक्षस, दुर्जन, नर, बाघ, सिंह, भालू, शियार, नाग, हाथी और घोड़े, सभी (हिंसक) पशु और जो भी (हिंसक) शरीरधारी प्राणी हैं, वे सभी (तत्क्षण) नष्ट हो जाते हैं और (उनसे उत्पन्न कष्ट दूर हो जाते हैं)॥१६६-१६८॥

ईश्वरादिक्रोधशान्ति

'ॐ शान्ते प्रशान्ते सर्वक्रोधोपशमनि स्वाहा ।'
अनेन मंत्रेण त्रिः सप्तधा जप्तेन मुखमार्जयेत् ॥१६९॥

ईश्वरादिक्रोधशान्ति

'ॐ शान्ते प्रशान्ते सर्वक्रोधोपशमनि स्वाहा'—मन्त्र से पानी को इक्कीस बार (३×७=२१बार) अभिमन्त्रित कर मुख धोने से (मनुष्य के) सभी प्रकार के क्रोध शान्त हो जाते हैं॥१६९॥

वशीकरण

अथाग्रे संप्रवक्ष्यामि वशीकरणमुत्तमम् ।
राजप्रजापशूनां च शृणु रावण यत्नतः ॥१७०॥

वशीकरण

(भगवान् शंकर ने कहा!) अब आगे उत्तम वशीकरण (मन्त्र को) तुम्हें बतलाने जा रहा हूँ, जिसके प्रभाव से राजा, प्रजा और पशु (पक्षी सभी) वशीभूत हो जाते हैं। इसलिए हे रावण! इसको (वशीकरण की विधि को) अत्यन्त ध्यानपूर्वक सुनो॥१७०॥

प्रियंगु तगरं कुष्ठं चंदनं नागकेशरम्।
कृष्णधत्तूरपंचांगं समभागं तु कारयेत्॥१७१॥
छायायां वटिका कार्या प्रदेयाऽवदनपानयोः।
पुरुषो वाथ नारी च यावज्जीवं वशे भवेत्॥
त्रिसप्ताहं मंत्रयेत्तां मंत्रेणानेन मंत्रवित्॥१७२॥
मंत्रस्तु–"ॐ नमो भगवते उड्डामरेश्वराय।
मोहय मोहय मिलि मिलि ठः ठः॥"
एक चित्तस्थितो मन्त्री जपेन्मन्त्रमतंद्रितः॥
त्रिंशत्सहस्रसंख्याकं सर्वलोकवशंकरम्॥१७३॥

(हे रावण!) प्रियंगु (कांगनी) तगर, कुष्ठ, चन्दन, नागकेशर तथा काले धतूरे का पंचांग (बीज, फल, फूल, पत्ती, जड़) बराबर मात्रा में लेकर गोली बनाकर छाया में सुखा लेना चाहिए। इन गोलियों को खाने-पीने की वस्तुओं में मिलाकर जिस आदमी अथवा महिला को 'ओऽम् नमो भगवते उड्डामरेश्वराय मोहय, मोहय मिलि मिलि ठः ठः' मन्त्र से मन्त्रज्ञ द्वारा तीन सप्ताह तक अभिमंत्रित करके दे देने और व्यक्ति द्वारा खा लेने पर वह पुरुष अथवा स्त्री जीवनपर्यन्त मन्त्र साधक के वशीभूत रहता है। जो आदमी (मन्त्री=मन्त्र का जप करने वाला) एकाग्रचित्त से और बिना आलस्य के इस मन्त्र को तीस हजार बार जप ले तो वह सभी लोगों को वशीभूत करने वाला हो जाता है॥१७१-१७३॥

पुष्येपुनर्नवामूलं करे सप्ताभिमंत्रितम्।
बद्ध्वा सर्वत्र पूज्यः स्यात्सर्वलोकवशंकरः॥१७४॥
मंत्रस्तु–'ॐनमः सर्वलोकवशंकराय कुरु कुरु स्वाहा'॥

पुष्य नक्षत्र में पुनर्नवा की जड़ को लाकर 'ॐनमः सर्वलोकवशंकराय कुरु कुरु स्वाहा' मन्त्र से सात बार अभिमंत्रित करके बाँधने से मन्त्र साधक

मनुष्य (हाथ, गले अथवा शरीर के किसी भाग में, परन्तु हाथ और गला सर्वोत्तम है) प्रत्येक स्थल पर पूजित होता है अर्थात् सम्मान प्राप्त करता है तथा सभी प्राणियों को अपने वश में करने वाला बन जाता है।।१७४।।

बिल्वपत्राणि संगृह्य मातुलुंगं तथैव च।
अजादुग्धेन संपिष्य तिलकं लोकवश्यकृत् ।।१७५।।

बेल के पत्ते और मातुलुंग (नीबू) के पत्तों को लेकर बकरी के दूध से पीसकर तिलक लगा लेने पर (जो भी स्त्री-पुरुष उस तिलक को देखता है) वह वश में हो जाता है अर्थात् तिलक लगाकर वह आदमी जिसके भी सामने जायेगा वे सभी वशीभूत हो जायेंगे।।१७५।।

राजवशीकरण

कुंकुमं चन्दनं चैव रोचनं शशिमिश्रितम्।
गवां क्षीरेण तिलकं राजवश्यकरं परम्।
मन्त्रः–ॐ ह्रीं सः अमुकं मे वशमानय स्वाहा ।।
पूर्वमेव सहस्त्रं जप्त्वाऽनेन मन्त्रेण सप्ताभिमन्त्रितं तिलकं कार्यम ।।१७६।।

राजवशीकरण

पहले 'ॐ ह्रीं सः अमुकं मे वशमानय स्वाहा' मन्त्र को एक हजार बार जप कर सिद्ध कर लेना चाहिए तत्पश्चात् कुंकुम, चंदन, गोरोचन तथा भीमसेनी कपूर को गाय के दूध में फेट कर उक्त मन्त्र से सात बार अभिमंत्रित कर तिलक लगाने से वह जिस भी राजा (अधिकारी) के पास जायेगा, वह राजा निश्चित ही वश में हो जाता है।।१७६।।

स्त्रीवशीकरण

अथातः संप्रवक्ष्यामि योगानां सारमुत्तमम्।
यस्य विज्ञानमात्रेण नारी भवति किंकरी ।।१७७।।

स्त्रीवशीकरण

(हे रावण!) अब प्रयोगों (योगों) के उत्तम तत्त्व को बतला रहा हूँ जिसके विज्ञान मात्र (ज्ञान, साधन मात्र) से स्त्री दासी (किंकरी) के समान वश में हो जाती है।।१७७।।

मन्त्रः–'ॐनमः कामाख्यादेवि अमुकीं मे वशमानयस्वाहा'। अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ॥१७८॥

साधक व्यक्ति को सर्वप्रथम 'ॐनमः कामाख्यादेवि अमुकीं मे वशमानय स्वाहा' मन्त्र को एक सौ आठ बार जप कर सिद्ध करने के पश्चात् ही स्त्री वशीकरण के प्रयोग कर्म में प्रवृत्त होना चाहिए।।१७८।।

ब्रह्मदंडी चिताभस्म यस्या अङ्गे क्षिपेन्नरः।
वशीभवति सा नारी नान्यथा शंकरोदितम् ॥१७९॥

ब्रह्मदण्डी (कोई जादुई सूत्र या मन्त्र अथवा मन्त्र का उच्चारण जो किसी पर चमत्कारी प्रभाव डाले या भटकटैया की जड़) और चिता की राख लेकर (उपर्युक्त मन्त्र से अभिमंत्रित कर) जिस भी स्त्री के शरीर पर फेंक दिया जायेगा वह स्त्री निश्चित ही वश में हो जायेगी। (भगवान्) शंकर कहते हैं कि मेरी यह वाणी कभी भी असत्य नहीं हो सकती।।१७९।।

कृष्णोत्पलं मधुकरस्य च पक्षयुग्मं
मूलं तथा तगरजं सितकाकजंघा।
यस्याः शिरोगतमिदं विहितं विचूर्णं
दासी भवेज्क्षटिति सा तरुणी विचित्रम् ॥१८०॥

काला कमल, भौंरे का दोनों पंख, तगर की जड़ और सफेद कौवे के जंघे का चूर्ण बनाकर, चूर्ण को उपर्युक्त मन्त्र से अभिमंत्रित कर किसी भी

नोट—अमुकं अथवा अमुकीं के स्थान पर साध्य पुरुष और साध्य स्त्री के नाम का मन्त्र में उच्चारण करना चाहिए।

विलक्षण सुन्दरी के शिर पर डाल देने से वह नव युवती शीघ्र ही दासी के समान वश में हो जाती है॥१८०॥

सिंधूत्थमाक्षिककपोतमलांश्च पिष्ट्वा
लिंगं विलिप्य तरुणीं रमते नवोढाम्।
साऽन्यं न याति पुरुषं मनसापि नूनं
दासी भवेदतिमनोहरदिव्यमूर्तिः॥१८१॥

सेंधा नमक, शहद तथा कबूतर की ट्टटी को पीसकर तथा मनुष्य अपने लिङ्ग में पोतकर जिस भी नवयुवती को साथ रमण करेगा वह युवती निश्चय ही मन से भी किसी अन्य पुरुष के पास जाने को नहीं सोचेगी और सदैव दासी बनाकर उस मनोहर (आकर्षक शरीर वाले) पुरुष के वशीभूत ही रहेगी॥१८१॥

पतिवशीकरण

रोचनं मत्स्यपित्तं च मयूरस्य शिखां तथा।
मधुसर्पिःसमायुक्तं स्त्रीवराङ्गे तु लेपयेत्।
निभृते मैथुने भावे पतिर्दासो भविष्यति॥१८२॥

पति का वशीकरण

गोरोचन, मछली का पित्ताशय (Gall Bladder) और मोर पक्षी की शिखा को पीसकर शहद तथा घी में मिलाकर जो भी स्त्री अपनी योनि में पोतकर पति के साथ रमण करेगी और मैथुन क्रिया समाप्त हो जाने के पश्चात् वह पति हमेशा के लिए दास के समान बन जायेगा अर्थात् सदैव के लिए पति अपनी स्त्री के वश में रहेगा॥१८२॥

कुलत्थं बिल्वपत्रं च रोचना च मनःशिला।
एतानि समभागानि स्थापयेत्ताम्रभाजने।
सप्तरात्रस्थिते पात्रे तैलमेवं पचेततः॥१८३॥

तैलेन भगमालिप्य भर्त्तारमनुगच्छति ।
संप्राप्ते मैथुने भर्त्ता दासो भवति नान्यथा ॥१८४॥

कुलथी (एक प्रकार भी दाल जो पहाड़ों पर पैदा होती है) बेल का पत्ता, गोरोचन तथा मन:शिला (लाल संखिया जहर) को बराबर मात्रा में लेकर ताँबें के पात्र में सात रात तक रखकर फिर तेल में पकाना चाहिए, पकने के बाद निकले तेल को योनि में पोतकर (कोई स्त्री) पति के साथ यदि रमण करे तो पति दास के समान वशीभूत हो कर रहेगा, इसमें रञ्चमात्र की सन्देह नहीं है॥१८३-१८४॥

स्तम्भन

आसनस्तम्भन

'ॐ नमो दिगम्बराय अमुकासनस्तम्भनं कुरुस्वाहा॥' इति मंत्रः॥ अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ॥

श्वेतगुञ्जाफलं क्षिप्तं नृकपाले तु मृत्तिकाम् ।
बलिं दत्त्वा तु दुग्धस्य तस्य वृक्षो भवेद्यदा ॥१८५॥
तस्य शाखा लता ग्राह्या यस्याग्रे तां विनिक्षिपेत् ।
तस्य स्थाने भवेत्स्तंभः सिद्धियोग उदाहृतः ॥१८६॥

स्तम्भन

आसन का स्तम्भन

(हे रावण!) आसन स्तम्भन कर्म में सर्वप्रथम 'ॐ नमो दिगम्बराय अमुकासनस्तम्भनं कुरु स्वाहा' मन्त्र को एक सौ आठबार जप कर सिद्ध कर लेना चाहिए। मनुष्य की खोपड़ी में मिट्टी भरकर उसमें सफेद घुँघुची के बीज का वपन कर देना चाहिए और उसे दूध से प्रतिदिन सींचना चाहिए। पौधा निकल आने पर उसे उखाड़कर जिस किसी के भी सामने फेंका जायेगा उसका आसन स्तम्भित हो जायेगा। यह सिद्ध प्रयोग का उदाहरण है (अर्थात्

साधक को इस प्रयोग के विषय में किसी भी प्रकार का सन्देह नहीं करना चाहिए।।१८५-१८६।।

अग्निस्तम्भनः

'ॐ नमो अग्निरूपाय मम शरीरे स्तम्भनं कुरु कुरु। स्वाहा!' इति मंत्रः।। अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ।।

वसां गृहीत्वा माण्डूकीं कौमारीरसपेषिताम् ।
लेपमात्रे शरीराणामग्निस्तम्भः प्रजायते ।।१८७।।

अग्नि का स्तम्भन

सर्वप्रथम 'ॐ नमो अग्निरूपाय मम शरीरे स्तम्भनं कुरु कुरु स्वाहा' मन्त्र को एक सौ आठ बार जप कर सिद्ध कर लेना चाहिए। मेंढक के चमड़े को घृतकुमार के रस में पीसकर अपने शरीर में पोतने से अग्नि स्तम्भित हो जाती है अर्थात् अग्नि उसके शरीर को जला पाने में सर्वथा असमर्थ हो जाती है।।१८७।।

आज्यं शर्करया पीत्वा चर्वयित्वा च नागरम् ।
तप्तलोहं मुखे क्षिप्तं क्वचिद् वक्त्रं न दह्यते ।।१८८।।

घी तथा शक्कर को पीकर नागर अर्थात् सोंठ को चबायें इसके बाद यदि उसके मुख में जलता हुआ लोहा रख देने पर भी उसका मुख नहीं जलता है अर्थात् अग्नि स्तम्भित हो जाती है।।१८८।।

शस्त्रस्तम्भन मन्त्र

'ॐ अहो कुम्भकर्ण महाराक्षस कैकसीगर्भसम्भूत परसैन्यस्तम्भन महाभगवान् रुद्रोऽर्पयति स्वाहा।' अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ।।

खर्ज्जूरी मुखमध्यस्था, कटिबद्धा च केतकी ।
भुजदंडे स्थिते चार्के सर्वशस्त्रनिवारणम् ।।१८९।।

शस्त्र का स्तम्भन

सर्वप्रथम 'ॐ अहो कुम्भकर्ण महाराक्षस कैकसीगर्भसम्भूत परसैन्यस्तम्भन-महाभगवान् रुद्रोऽर्पयति स्वाहा'—मन्त्र को एक सौ आठ बार विधि-विधान से जप कर सिद्ध कर लेने के बाद मुख में खजूरी (खजूर), कमर में केतकी तथा बाँह में अर्क (मदार) धारण करने पर सभी अस्त्र-शस्त्र स्तम्भित हो जाते हैं अर्थात् साधक मनुष्य पर शस्त्र अपना कार्य करने में असमर्थ हो जाते हैं।।१८९।।

गृहीत्वा रविवारे तु बिल्वपत्रं च कोमलम्।
पिष्ट्वा बिससमं सद्यः शस्त्रस्तंभस्तु लेपनात्।।१९०।।

रविवार के दिन कोमल बेल के पत्तों को लाकर तथा सिवार (तालाब आदि में उगने वाली घास) के साथ पीसकर शरीर में पोंत लेने पर सभी अस्त्र-शस्त्रों का शीघ्र ही स्तम्भन हो जाता है अर्थात् साधक के शरीर पर किसी भी शस्त्रास्त्र का कोई भी प्रभाव नहीं पड़ता है।।१९०।।

सैन्यस्तम्भन मन्त्र

'ॐनमः कालरात्रि त्रिशूलधारिणि मम शत्रुसैन्यस्तम्भनं कुरु कुरु स्वाहा।।' अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ।।

रविवारे तु गृह्णीयाच्छ्वेतगुंजाफलं सुधीः।
निखनेच्च श्मशाने वै पाषाणं तत्र धापयेत्।।१९१।।

अष्टौ च योगिनीः पूज्या रौद्री माहेश्वरी तथा।
वाराही नारसिंही च वैष्णवी च कुमारिका।।१९२।।

लक्ष्मीर्ब्राह्मी च संपूज्या गणेशो बटुकस्तथा।
क्षेत्रपालः सदा पूज्यः सेनास्तंभो भविष्यति।।१९३।।

पृथक् पृथक् बलिं दत्त्वा दशनामविभागतः।

मांसं मद्यं तथा पुष्पं धूपं दीपावलीक्रिया ।
यस्मै कस्मै न दातव्यं यान्यथा शङ्करोदितम् ॥१९४॥

सैन्य स्तम्भन

(हे वत्स!) सर्वप्रथम 'ॐ नमः कालरात्रि त्रिशूलधारिणि मम शत्रुसैन्यस्तम्भनं कुरु कुरु स्वाहा'—मन्त्र को एक सौ आठ बार विधिपूर्वक जप कर सिद्ध कर लेने के पश्चात् विद्वान् व्यक्ति को रविवार के दिन सफेद गुंजाफल को लाकर श्मशान में गाड़कर उसके ऊपर पत्थर रख देना चाहिए। इसके बाद रौद्री, माहेश्वरी, वाराही, नारसिंहीं, वैष्णवी, कौमारी, लक्ष्मी तथा ब्राह्मी नामक आठ योगिनियों की विधि-विधान पूर्वक पूजा करनी चाहिए और गणेश, बटुक तथा क्षेत्रपाल की अलग-अलग सदैव विधि-विधान से पूजा करके अलग-अलग दशनामविभाग पूर्वक (अर्थात् दशों दिशाओं के स्वामियों के नाम का उच्चारण करते हुए) बलि देने पर सेना स्तम्भित हो जाती है। मांस, मदिरा, फूल, धूप और दीपावली (अर्थात् दीप प्रज्ज्वलन) क्रिया द्वारा पूजन करने से शत्रु की सेना स्तम्भित हो जाती है। भगवान् शंकर का कथन है कि इस क्रिया को जिस किसी भी व्यक्ति को नहीं बताना चाहिए॥१९१-१९४॥

सैन्यविमुखीकरण

'ॐ नमो भयङ्कराय खङ्गधारिणे मम शत्रुसैन्य-पलायनं कुरु कुरु स्वाहा॥' अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ।

भौमवारे गृहीत्वा तु काकोलूकौ तु पक्षिणौ ।
भूर्जपत्रे लिखेन्मन्त्रं तस्य नामसमन्वितम् ॥१९५॥
गोरोचने गले बद्ध्वा काकोलूकस्य पक्षिणः ।
सेनानी सम्मुखं गच्छेन्नान्यथा शङ्करोदितम् ॥१९६॥
शब्दमात्रे सैन्यमध्ये पलायन्तेऽतिनिश्चितम् ।
राजा प्रजा राजादिश्च नान्यथा शंकरोदितम् ॥१९७॥

सैन्यविमुखीकरण

रणभूमि से शत्रु की सेना को भगाने के लिए सर्वप्रथम 'ॐ नमो भयङ्कराय खड्गधारिणे मम शत्रुसैन्यपलायनं कुरु कुरु स्वाहा'—मन्त्र को एक सौ आठ बार विधिपूर्वक जपकर सिद्ध कर लेने के बाद मंगलवार के दिन कौवा तथा उल्लू को लेकर भोजपत्र पर गोरोचन से शत्रु के नाम सहित मन्त्र को लिखकर उसे दोनों पक्षियों के गले में बाँधकर छोड़ देने पर जब दोनों पक्षी शत्रु के समाने जायेंगे तो तत्क्षण शत्रु सेना भयाक्रान्त होकर राजा, प्रजा, हाथी, घोड़े आदि सहित अवश्य ही पलायन कर जायेगी। (भगवान्) शंकर का यह कथन अन्यथा अर्थात् मिथ्या नहीं हो सकता है॥१९५-१९७॥

जलस्तम्भनमन्त्र

'ॐनमो भगवते रुद्राय जलं स्तंभय स्तंभय ठः ठः ठः ॥'इति मन्त्रः ॥ अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ॥

पद्मकं नाम यद्द्रव्यं सूक्ष्मचूर्णं तु कारयेत्।
वापीकूपतडागादौ निक्षिपेत्स्तंभते जलम् ॥१९८॥

जलस्तम्भन

(हे भक्त श्रेष्ठ!) सर्वप्रथम 'ॐनमो भगवते रुद्राय जलं स्तंभय स्तंभय ठः ठः ठः'—मन्त्र को एक सौ आठ बार विधि-विधान से जपकर सिद्ध कर लेने के पश्चात् पद्मक नामक द्रव्य (औषधीय लकड़ी का) का महीन चूर्ण बनाकर (उक्त मन्त्र से १०८ बार अभिमंत्रित कर उस चूर्ण को) वापी, कूँआ तथा तालाब आदि में फेंक देने पर तत्क्षण पानी स्तम्भित हो जाता है अर्थात् साधक पर जल का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। ध्यातव्य है कि दुर्योधन इसी प्रकार की विद्या से तालाब के भीतर जाकर छिप गया था और पाण्डवों द्वारा ललकारे जाने के बाद ही बाहर आया। प्रतीत होता है कि दुर्योधन भी तन्त्रविद्या का महाज्ञानी और सफल साधक था॥१९८॥

मेघस्तम्भन-मन्त्र

'ॐनमो भगवते रुद्राय मेघं स्तंभय स्तंभय ठः ठः ठः ।।' इति मंत्रः ।। अष्टोत्तरशतजपेनास्य सिद्धिः ।।

इष्टकाद्वयमादाय श्मशानांगारसंपुटे ।
स्थापयेद्वनमध्ये च मेघस्तंभनकारकम् ।।१९९।।

बादल का स्तम्भन

पूर्वोक्त तरीके से सर्वप्रथम 'ॐनमो भगवते रुद्राय मेघं स्तंभय स्तंभय ठः ठः ठः'—मन्त्र को एक सौ आठ बार जपने से यह सिद्ध हो जाता है। दो ईटों को लेकर उनके बीच में श्मशान का अंगार रखकर जंगल में गाड़ देने पर बादल स्तम्भित हो जाता है। यह महालोकोपकारी मन्त्र हैं जिसके द्वारा आतिवृष्टि से... निवारण होता है या और अधिक इच्छित वृष्टि होती है।।१९९।।

नौकास्तंभन-मन्त्र

ॐ नमो भगवते रुद्राय नौकां स्तंभय स्तंभय ठः ठः ठः ।' इति मंत्रः ।। अष्टोत्तरशतजपेनास्य सिद्धिः ।।

भरण्यां क्षीरकण्ठस्य कीलं पञ्चांगुलं क्षिपेत् ।
नौकास्तंभनमेतद्धि मूलदेवेन भाषितम् ।।२००।।

नौका का स्तंभन

'ॐ नमो भगवते रुद्राय नौकां स्तंभय स्तंभय ठः ठः ठः'—मन्त्र को पूर्वोक्त ढंग से एक सौ आठ बार विधिवत् जप कर सिद्ध करने के बाद भरणी नक्षत्र में क्षीर के पेड़ की पाँच अंगुल की कील बनाकर नाव में डालने से गतिमान नौका स्तम्भित होकर रुक जाती है। यह विद्या मूलदेव अर्थात् भगवान् शङ्कर के द्वारा (रावण को) बताई गई है।।२००।।

मनुष्यस्तम्भन-मन्त्र

'ॐनमो भगवते रुद्राय अमुकं स्तंभय स्तंभय ठः ठः ठः ॥ अष्टोत्तरशतजपेनास्य मन्त्रस्य सिद्धिः ।

नीत्वा रजस्वलावस्त्रं गोरोचनसमन्वितम् ।
यस्य नाम क्षिपेत्कुम्भे सद्यः स्तंभनकारकम् ॥२०१॥

मनुष्यों का स्तम्भन

'ॐनमो भगवते रुद्राय अमुकं स्तंभय स्तंभय ठः ठः ठः'—मन्त्र को एक सौ आठ बार विधि-विधानपूर्वक जप कर सिद्ध करने के पश्चात् रजस्वला महिला का वस्त्र लेकर गोरोचनं मिलाकर उस पर जिसका नाम लिखकर पानी भरे घड़े में रख दिया जायेगा वह आदमी शीघ्र ही स्तम्भित हो जायेगा ॥२०१॥

निंद्रास्तम्भन-मन्त्र

'ॐनमो भगवते रुद्राय निद्रां स्तंभय स्तंभय ठःठःठः ॥' इति मन्त्रः । अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ॥

मूलं बृहत्या मधुकं पिष्ट्वा नस्यं समाचरेत् ।
निद्रास्तंभनमेतद्धि मूलदेवेन भाषितम् ॥२०२॥

निद्रा का स्तम्भन

'ॐनमो भगवते रुद्राय निद्रां स्तंभय स्तंभय ठः ठः ठः'—मन्त्र को एक सौ आठ बार विधिवत् जपकर सिद्ध कर लेने के पश्चात् बृहती की जड़ और मधुक (मुलहठी—एक प्रकार की जड़) को पीसकर नाम मात्र का उच्चारण करने पर नींद नहीं आती है अर्थात् निद्रा स्तम्भित हो जाती है। मूल देवेता (अर्थात् भगवान् शङ्कर) द्वारा यह बात मन्त्र में ही कही गई है।॥२०२॥

गोमहिष्यादिस्तंभन-मन्त्र

'ॐनमो भगवते रुद्राय गोमहिष्यादी[1]न् स्तंभय स्तंभय ठः ठः ठः ॥' अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ॥

उष्ट्रस्यास्थि चतुर्दिक्षु निखनेद्भूतले ध्रुवम् ।
गोमहिष्यादिकस्तंभः सिद्धियोग उदाहृतः ॥२०३॥

गाय, भैंसादि का स्तम्भन

'ॐनमो भगवते रुद्राय गोमहिष्यादीन् स्तंभय स्तंभय ठः ठः ठः'—मन्त्र को एक सौ आठ बार विधि-विधान के साथ जपकर सिद्ध कर लेने के पश्चात् ऊँट की हड्डी को अभिमंत्रित कर गोशाला की चारों दिशाओं में गाड़ देने से गाय, भैंस आदि का निश्चित ही स्तम्भन हो जाता है। यह सिद्धि योग का उदाहरण है। (अर्थात् यह प्रयोग अचूक है। साधक को इस प्रयोग में कभी असफलता नहीं मिलती है, सफलता निश्चित है।)॥२०३॥

पशुस्तंभन-मन्त्र

'ॐनमो भगवते रुद्राय अमुकं पशुं स्तंभय स्तंभय ठः ठः ठः ॥' अष्टोत्तरशतजपेनास्य मन्त्रस्य सिद्धिः ।

उष्ट्रलोम गृहीत्वा तु पशूपरि विनिक्षिपेत् ॥
पशूनां भवति स्तंभः सिद्धियोग उदाहृतः ॥२०४॥

पशु का स्तम्भन

'ॐनमो भगवते रुद्राय अमुकं पशुं स्तंभय स्तंभय ठः ठः ठः' मन्त्र को एक सौ आठ बार पूर्णविधि से जप कर सिद्ध कर लेने के पश्चात् साध्य पशु

---

१. गौ के स्तम्भन में 'गां स्तंभय स्तंभय' और महिषी के स्तम्भन में 'महिषी स्तम्भय स्तम्भय' मन्त्र के साथ कहे।

नोट—मन्त्रो में अमुकं, अमुकीं के स्थान पर साध्य आदमी अथवा स्त्री आदि के नाम से तात्पर्य है।

के ऊपर ऊँट के बाल को अभिमंत्रित कर डाल देने पर वह पशु स्तम्भित हो जाता है। यह सिद्धि योग का उदाहरण है॥२०४॥ (मन्त्र में अमुकं के स्थान पर पशु के नाम का मन्त्र के साथ उच्चारण करना चाहिए।)

मोहन-मन्त्र

'ॐ ह्रीं कालि कपालिनि घोरनादिनि विश्वं विमोहय जगन्मोहय सर्वं मोहय मोहय ठः ठः ठः स्वाहा॥' लक्षजपेनास्य मन्त्रस्य सिद्धिः॥

मोहन-मंत्र

(हे रावण!) सर्वप्रथम पूरे विधि-विधान से 'ॐ ह्रीं कालि कपालिनि घोरनादिनि विश्वं विमोहय जगन्मोहय सर्वं मोहय मोहय ठः ठः ठः स्वाहा' मन्त्र को एक लाख बार जप कर सिद्ध करने के उपरान्त मोहन कर्म के प्रयोग में साधक मनुष्य को प्रवृत्त होना चाहिए।

सर्वजगन्मोहन-मन्त्र

श्वेतगुंजारसैः पेष्यं ब्रह्मदण्ड्याश्च मूलकम्।
लेपमात्रं शरीराणां मोहनं सर्वतो जगत्॥२०५॥

सर्वजगन्मोहन मंत्र

ब्रह्मदण्ड की जड़ (सम्भवतः भटकटैया) को सफेद गुंजा के रस से पीसकर, मन्त्र से अभिमंत्रित कर शरीर में पोतने से व्यक्ति समस्त संसार को (मानव, दानव, पशु, पक्षी सभी को) मोहित कर लेता है॥२०५॥

गृहीत्वा तुलसीपत्रं छायाशुष्कं तु कारयेत्।
अश्वगंधासमायुक्तं विजयाबीजसंयुतम्॥२०६॥
कपिलाक्षीरसहिता वटी रक्तिप्रमाणतः।
भक्षिता प्रातरुत्थाय मोहयेत्सर्वतो जगत्॥२०७॥

तुलसी के पत्तों को छाया में सुखाकर, अश्वगंधा और भाँग (विजया) के बीज के साथ कपिला गाय के दूध से पीसकर रत्ती-रत्ती भर की गोलियाँ बनाकर, अभिमंत्रित कर सुबह उठकर खाने से सम्पूर्ण जगत् (सभी लोग) मोहित हो जाता है॥२०६-२०७॥

श्वेतार्कमूलं सिन्दूरं पेषयेत्कदलीरसे ।
अनेनैव तु तंत्रेण तिलकं लोकमोहनम् ॥२०८॥

सफेद अर्क (मन्दार) की जड़ तथा सिन्दूर को केले के रस में पीसकर तथा उपर्युक्त मन्त्र से अभिमन्त्रित कर तिलक लगाने से सम्पूर्ण संसार का मोहन हो जाता है। (अर्थात् समस्त प्राप्पी साधक व्यक्ति के वश में आ जाते हैं।)॥२०८॥

बिल्वपत्रं गृहीत्वा तु छायाशुष्कं तु कारयेत् ।
कपिलापयसार्द्धेन वटी कृत्वा तु गोलकम् ।
एभिस्तु तिलकं कृत्वा मोहयेत्सर्वतो जगत् ॥२०९॥

बेल के पत्तों को छाया में सुखाकर चूर्ण बनाकर, कपिला गाय के दूध से गोली बनाकर उपर्युक्त मन्त्र से अभिमंत्रित कर गोली को घिसकर तिलक लगाने से सम्पूर्ण संसार मोहित हो जाता है अर्थात् साधक तिलक लगाकर जिस क़िसी भी प्राणी के समक्ष जायेगा वह प्राणी तिलक देखते ही उसके वश में हो जायेगा।

विद्वेषण-मन्त्र

'ॐ नमो नारायणाय अमुकस्य अमुकेन सह विद्वेषं कुरु कुरु स्वाहा।' अष्टोत्तरशतंजपेन मंत्रसिद्धिः ॥

सर्वप्रथम 'ॐ नमो नारायणाय अमुकस्य अमुकेन सह विद्वेषं कुरु कुरु स्वाहा'—मन्त्र को एक सौ आठ बार विधि पूर्वक पूजन-अर्चन के साथ जप कर सिद्ध कर लेने के पश्चात् ही मनुष्य को विद्वेषण कर्म के अनुष्ठान को प्रारम्भ करना चाहिए।

एकहस्ते काकपक्षमुल्लूपक्षं करे परे।
मंत्रयित्वा मिलेदग्रं कृष्णसूत्रेण बन्धयेत् ॥२१०॥
अञ्जलिं च जले चैव तर्पयेद्धस्तपक्षके।
एवं सप्तदिनं कुर्यादष्टोत्तरशतं जपेत् ॥२११॥

एक हाथ में कौवे का पंख तथा दूसरे हाथ में उल्लू का पंख लेकर उपर्युक्त मंत्र से अभिमंत्रित कर दोनों पक्षियों के पंखों को काले धागे से एक साथ बाँधकर पुनः दोनों पंखों को दोनों हाथों में लेकर अंजलि में जल भरकर तर्पण करना चाहिए। इस प्रकार सात दिन तक अनवरत एक सौ आठ-एक सौ आठ बार मन्त्रोच्चारणपूर्वक तर्पण करने पर साध्य दोनों व्यक्तियों में विद्वेष हो जायेगा अर्थात् दोनों व्यक्ति आपस में शत्रु हो जायेंगे॥२१०-२११॥

गृहीत्वा गजकेशं च गृहीत्वा सिंहकेशकम्।
गृहीत्वा मृत्तिकापादं पुत्तलीं निखनेद्भुवि ॥२१२॥
अग्निस्तस्योपरि स्थाप्यो मालतीकुसुमं हुनेत्।
विद्वेषं कुरुते तस्य नान्यथा शङ्करोदितम् ॥२१३॥

हाथी तथा शेर के बालों को लेकर साध्य व्यक्तियों के पैर के नीचे की मिट्टी से पुतली बनाकर बालों के सहित जमीन में गाड़ दे, पुनः उस भूमि पर अग्नि स्थापित कर मालती के फूलों से हवन करे तो साध्य दोनों मनुष्यों में विद्वेष हो जाता है। भगवान् शंकर के द्वारा बताया गया यह प्रयोग कभी भी अन्यथा अर्थात् मिथ्या नहीं हो सकता॥२१२-२१३॥

गृहीत्वा गजदन्तं च गृहीत्वा सिंहदन्तकम्।
पेषयेन्नवनीतेन तिलकं द्वेषकारकम् ॥२१४॥

हाथी तथा शेर के दाँतों को मक्खन के साथ पीसकर, पूर्वोक्त मन्त्र से अभिमंत्रित कर साध्य दोनों व्यक्तियों के मस्तक पर तिलक लगाने से दोनों

में विद्वेष हो जाता है। (शंकरजी का यह कथन कभी असत्य नहीं हो सकता)॥२१४॥

उच्चाटन-मन्त्र

'ॐनमो भगवते रुद्राय दंष्ट्राकरालाय अमुकस्य स्वपुत्रबांधवैः सह हन हन दह दह पच पच शीघ्रमुच्चाटय उच्चाटय हुं फट् स्वाहा ठः ठः ॥' अष्टोत्तरशतजपेन मंत्रसिद्धिः ॥

(हे रावण!) 'ॐनमो भगवते रुद्राय दंष्ट्राकरालाय अमुकस्य स्वपुत्रबांधवैः सह हन हन दह दह पच पच शीघ्रमुंच्चाटय उच्चाटय हुं फट् स्वाहा ठः ठः'—मन्त्र का विधिपूर्वक पूजन और अर्चन करके एक सौ आठ बार जप कर सिद्ध करने के पश्चात् ही साधक को उच्चाटन कर्म का प्रयोग प्रारम्भ करना चाहिए।

काकोलूकस्य पक्षं तु हुत्वा चाष्टाधिकं शतम् ।
यन्नाम्ना मंत्रयोगेन तदाऽस्योच्चाटनं भवेत् ॥२१५॥

साध्य व्यक्ति का नाम मन्त्र में अमुक के स्थान पर उच्चारण कर कौवे तथा उंल्लू के पंखों से एक सौ आठ बार हवन करने पर साध्य मनुष्य का उच्चाटन हो जाता है॥२१५॥

ब्रह्मदंडी चिताभस्म शिवलिङ्गे प्रलेपयेत् ॥२१६॥
सिद्धार्थं चैव संयुक्तं शनिवारे क्षिपेद् गृहे ।
उच्चाटनं भवेत्तस्य जायते मरणान्तिकम् ॥२१७॥

एक मिट्टी का शिवलिङ्ग बनाकर उस पर ब्रह्मदण्डी सम्भवतः भटकटैया और चिता की राख को पोतकर शनिवार के दिन सायंकाल सफेद सरसों के साथ शिवलिङ्ग को उपर्युक्त मन्त्र से अभिमंत्रित कर साध्य व्यक्ति के घर में फेंक देने से उसका उच्चाटन निश्चित हो जाता है॥२१६-२१७॥

आकर्षण-मन्त्र

'ॐनमः आदि पुरुषाय अमुकस्य आकर्षणं कुरु कुरु स्वाहाः ॥' अष्टोत्तरशतजपेन सिद्धिः ॥

आकर्षण मन्त्र

सबसे पहले 'ॐनमः आदि पुरुषाय अमुकस्य आकर्षणं कुरु कुरु स्वाहाः' मन्त्र को एक सौ आठ बार विधि पूर्वक जपकर सिद्ध करने के बाद ही साधक व्यक्ति को आकर्षण मन्त्र के अनुष्ठान में प्रवृत्त होना चाहिए।

कृष्णधत्तूरपत्राणां रसं रोचनया युतम् ।
भूर्जपत्रे लिखेन्मत्रं श्वेतकरवीरलेखनैः ॥२१८॥
यस्य नाम लिखेन्मध्ये तापयेत्खदिराग्निभिः ।
शतयोजनमायाति नान्यथा शंकरोदितम् ॥२१९॥

काले धतूरे के रस में गोरोचन को घिसकर सफेद कण्डैल की लेखनी से भोजपत्र पर मंत्र सहित साध्य व्यक्ति का नाम मध्य में लिखकर खैर की लकड़ी की आग पर तपाने से साध्य व्यक्ति आकर्षित होकर सौ योजन की दूरी से भी भागकर आ जाता हैं। शंकर जी की यह वाणी कभी असत्य नहीं हो सकती॥२१८-२१९॥

अनामिकाया रक्तेन लिखेन्मन्त्रं च भूर्जके ।
यस्य मध्ये लिखेन्नाम मधुमध्ये च निक्षिपेत् ॥२२०॥
तदा चाकर्षणं याति सिद्धियोग उदाहृतः ।
यस्मै कस्मै न दातव्यं देवानामपि दुर्ल्लभम् ॥२२१॥

अनामिका अंगुली के खून से मन्त्र के साथ साध्य व्यक्ति का नाम भोजपत्र पर लिखकर शहद में रखने से साध्य व्यक्ति का आकर्षण हो जाता है। यह सिद्धि योग का उदाहरण है। (भगवान् शंकर कहते है कि) इस प्रयोग को हर किसी व्यक्ति को नहीं बतलाना चाहिए। (योग्य आदमी को

ही बताना चाहिए जो इसका दुरूप्रयोग न करे)। यह प्रयोग देवताओं के लिए भी दुर्लभ है।।२२०-२२१।।

मारणप्रयोग

अथातः संप्रवक्ष्यामि प्रयोगं मारणाभिधम्।
सद्यः सिद्धिकरं नृणां श्रृणु रावण यत्नतः ।।२२२।।

मारण मन्त्र

भगवान् शंकर कहते हैं कि अब मारण नामक प्रयोग (तुम्हें) बतलाने जा रहा हूँ जिसके प्रयोग से मनुष्यों को शीघ्र ही सिद्धि मिल जाती है, इसलिए हे रावण! उसे अत्यन्त सावधान होकर सुनो ।।२२२।।

मारणं न वृथा कार्यं यस्य कस्य कदाचन्।
प्राणांतसंकटे जाते कर्त्तव्यं भूतिमिच्छता ।।२२३।।

इस मारण का प्रयोग व्यर्थ में ही जिस किसी व्यक्ति पर नहीं करना चाहिए। प्राणों पर संकट आ जाने पर स्वयं को बचाने की कामना से ही मनुष्य को इस मारण मन्त्र का प्रयोग करना चाहिए।।२२३।।

मूर्खेण तु कृते तन्त्रे स्वस्मिन्नेव समापतेत्।
तस्माद्रक्ष्यःसदाऽऽत्मा वै मारणं न क्वचिच्चरेत् ।।२२४।।

(हे रावण!) मूर्ख व्यक्ति के द्वारा मारण कर्म का प्रयोग किये जाने पर उसी के लिए वह प्रयोग घातक बन जाता है। अतः मूर्ख आदमी को सदैव अपनी रक्षा करनी चाहिए। उसे कभी भी कहीं पर भी अर्थात् जिस किसी भी मनुष्य के ऊपर मारण कर्म का अनुष्ठान नहीं करना चाहिए।।२२४।। (मूर्ख से तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है जिसे प्रयोग की सम्यक् जानकारी न हो तथा जो केवल अपने क्षुद्र स्वार्थ की पूर्ति के लिए मारण का प्रयोग करना चाहता है।)

ब्रह्मात्मानं तु विततं दृष्ट्वा विज्ञानचक्षुषा।
सर्वत्र' मारणं कार्यमन्यथा दोषभाग् भवेत्।।

कर्त्तव्यं मारणं चेत्स्यात्तदा कृत्यं समाचरेत् ॥२२५॥

(हे वत्स!) ब्रह्मवेत्ता व्यक्ति को सभी को विज्ञान की दृष्टि से 'आत्मनः प्रतिकूलानि् परेषां न समाचरेत्' स्वयं के समान स्वीकार करते हुए यदि अत्यन्त आवश्यक हो तभी मारण कार्य का प्रयोग करना उचित है अन्यथा प्रयोगकर्त्ता पाप का भागी बनता है। (मारण कर्म का प्रयोग इस प्रकार करना चाहिए)॥२२५॥

ॐचाण्डालिनि कामाख्यावासिनि वनदुर्गे क्लीं क्लीं ठः स्वाहा॥ अयुतजपेन मन्त्रसिद्धिः ॥

स्वाहा!		
मारय ह्रीं	हुँ	अमुकं फट्

सर्वप्रथम 'ॐचाण्डालिनि कामाख्यावासिनि वनदुर्गे क्लीं क्लीं ठः स्वाहा'—मन्त्र को दश हजार बार पूर्णविधि-विधान से (अयुत जप) जपकर पूर्वोक्त विधि से सिद्धकर मारण कर्म के अनुष्ठान में साधक व्यक्ति को प्रवृत्त होना चाहिए।

इदं यन्त्रं लिखेद्भूर्जे रोचनाकुंकुमेन तु।
भौमे वा मन्दवारे वा बद्धवाऽरिं नाशयेद्गले ॥२२६॥

उपर्युक्त मन्त्र को भोजपत्र पर गोरोचन तथा कुंकुम से लिखकर मंगलवार अथवा शनिवार के दिन गले में पहनने से शत्रु की मृत्यु हो जाती है॥२२६॥

'ॐनमः सर्वकालसंहाराय अमुकं हन हन क्रीं हुं फट्। भस्मीकुरु स्वाहा॥' इति मंत्रः ॥ सहस्रजपादस्य सिद्धिः

'ॐनमः सर्वकालसंहाराय अमुकं हन हन क्रीं हुं फट्। भस्मीकुरु स्वाहा' नामक मन्त्र का विधिपूर्वक एक हजार बार जप करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है।

रिपुपादतलात्पांसुं गृहीत्वा पुत्तलीं कुरु ।
चिताभस्मसमायुक्तां मध्यमारुधिरान्विताम् ॥२२७॥
कृष्णवस्त्रेण संवेष्ट्य कृष्णसूत्रेण बन्धयेत् ।
कुशासने सुप्तामूर्तिर्दीपं प्रज्वालयेत्ततः ॥२२८॥
अयुतं प्रजपेन्मंत्रं पश्चादष्टोत्तरं शतम् ।
मंत्रराजप्रभावेण माषांश्चाष्टोत्तरं शतम् ॥२२९॥
पुत्तलीमुखमध्ये च निक्षिपेत्सर्वमाषकान् ।
अर्द्धरात्रिकृते योगे शक्रतुल्योऽपि मृत्युभाक् ॥२३०॥
प्रातःकाले पुत्तलिकां श्मशानान्ते विनिक्षिपेत् ।
मासात्मकप्रयोगेण रिपोमृत्युर्भविष्यति ॥२३१॥

शत्रु के दोनों पैर के नीचे की मिट्टी लाकर उसमें चिता की राख और मध्यमा अंगुली का खून मिलाकर, पुतला बनाकर, उसे काले कपड़े में लपेटकर, काले धागे से बाँधकर कुशनिर्मित आसन पर पुतले को सुलाकर (साधक को) दीप जला देना चाहिए। पुनः दशं हजार मन्त्र जपकर सिद्ध करने के बाद फिर एक सौ आठ बार मन्त्र से अभिमंत्रित कर एक सौ आठ उड़द के दाने को पुतले के मुख में रख देना चाहिए। अर्धरात्रि के समय इस प्रयोग को करने से इस राजतन्त्र के प्रभाव के कारण इन्द्र के समान शक्तिशाली शत्रु भी मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। प्रातःकाल उस पुतले को शमशान में फेंक देना चाहिए। एक मास पर्यन्त इस प्रयोग को करने पर शत्रु की अवश्य ही मृत्यु हो जायेगी॥२२७-२३१॥

आर्द्रपटी विद्या

'ॐनमो भगवति आर्द्रपटेश्वरि हरितनीलपटे कालि । आर्द्रजिह्वे चांडालिनि रुद्राणि कपालिनि ज्वालामुखि सप्तजिह्वे सहस्त्रनयने एहि एहि अमुकं ते पशुं ददामि, अमुकस्य जीवं निकृंतय, एहि एहि

तज्जीवितापहारिणि हुं फट् भूर्भुवः स्वःफट् रुधिरार्द्रवसाखादिनि मम शत्रून् छेदय छेदय, शोणितं पिब पिब हुं फट् स्वाहा॥' इति मंत्रः॥

अयुतजपेन सिद्धिः।

आर्द्रपटी विद्या

सर्वप्रथम 'ॐनमो भगवति.... हुँ फट स्वाहा' मन्त्र को पूर्ण विधिपूर्वक दश हजार बार जप कर सिद्ध करने के बाद मारण कर्म के अनुष्ठान में अमुक के स्थान पर शत्रु के नाम का उच्चारण करते हुए साधक मनुष्य को मन्त्र का जप करना चाहिए।

ॐअस्य श्रीआर्द्रपटीमहाविद्यामंत्रस्य दुर्वासा ऋषिर्गायत्री छंदः हुं बीजं स्वाहा शक्तिः मम अमुकशत्रुनिग्रहार्थे जपे विनियोगः॥

सर्वप्रथम 'ॐअस्य श्रीआर्द्रपटीमहाविद्यामंत्रस्य दुर्वासा ऋषिर्गायत्री छंदः हुं बीजं स्वाहा शक्तिः मम अमुकशत्रुनिग्रहार्थे जपे विनियोगः' इस विनियोग मन्त्र से अमुक के स्थान पर शत्रु के नाम का उच्चारण कर साधक को संकल्प कर लेना चाहिए।

केवलं जपमात्रेण मासान्ते शत्रुमारणम्।
कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत्कृष्णचतुर्दशी॥२३२॥
शत्रुनामसमायुक्तं मन्त्रं तावज्जपेन्नरः।
रिपुपादस्थधूल्याश्च कुर्यात्पुत्तलिकां ततः॥२३३॥
अजापुत्रं बलिं दत्त्वा वस्त्रं रक्तेन संलिपेत्।
ततो गृहीत्वा तद्वस्त्रं न्यसेत्पुत्तलिकोपरि॥२३४॥
यावच्छुष्यति तद्वस्त्रं तावच्छत्रुर्विनश्यति।
मन्त्रराजप्रभावेण नात्र कार्या विचारणा॥२३५॥

इति श्रीरावणशङ्करसंवादे उड्डीशतन्त्रे षट्कर्म-
निरूपणं नाम पूर्वार्द्धं समाप्तम्

(हे वत्स!) उपर्युक्त मन्त्र को शत्रु के नाम सहित कृष्णपक्ष की अष्टमी से प्रारम्भ कर कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी तिथि तक महीने भर प्रतिदिन (एक सौ आठ बार) जपने मात्र से शत्रु की मृत्यु हो जाती है। इस प्रयोग में शत्रु के पैर के नीचे की मिट्टी से पुतली बनाकर बकरे (खँसी) की बलि देकर उसके खून में वस्त्र को भिगोकर वस्त्र से पुतली को ढँक दे अथवा ओढ़ा दे। वस्त्र के सूखने तक शत्रु की मृत्यु मन्त्र (अर्थात् इस श्रेष्ठ मन्त्र) राज के प्रभाव से अवश्य हो जायेगी। इसमें किसी भी प्रकार का विचार अर्थात् सन्देह साधक को नहीं करना चाहिए॥२३२-२३५॥

इति श्रीरावणशङ्करसंवादे उड्डीशतन्त्रे षट्कर्मनिरूपणं
नाम पूर्वार्धस्य डॉ. शशिशेखर चतुर्वेदिना कृता
विभा नाम्नी हिन्दी व्याख्या परिसमाप्ता।



अथोत्तरार्द्धम्

रावण उवाच

सम्यगनुतिष्ठतो मन्त्रो यदि सिद्धो न जायते।
किं कुर्याच्च ततो देव ब्रूहि मे परमेश्वर ॥१॥

रावण ने कहा

हे देव! यदि सम्यक् (विधि-विधान से) अनुष्ठान करने पर (भी) मन्त्र सिद्ध न हो तब क्या करना चाहिए? हे परमेश्वर! उसको आप मुझे बतलाइये॥१॥

शिव उवाच

सम्यगनुतिष्ठतो मन्त्रो यदि सिद्धो न जायते।
पुनस्तेनैव कर्त्तव्यं ततः सिद्धो भवेद्ध्रुवम् ॥२॥

भगवान् शंकर ने कहा

(हे वत्स!) यदि सम्यक् अर्थात् पूर्णविधि-विधान से अनुष्ठान करने पर भी मन्त्र सिद्ध न हो सके तो पुनः विधि-विधान से उसी मन्त्र का अनुष्ठान करना चाहिए। पुनः अनुष्ठान करने से मन्त्र अवश्य ही सिद्ध हो जायेगा॥२॥

पुनरनुष्ठितो मन्त्रो यदि सिद्धो न जायते।
पुनस्तेनैव कर्त्तव्यं ततः सिद्धौ न संशयः ॥३॥

दूसरी बार भी अनुष्ठान करने पर यदि मन्त्र सिद्ध न हो सके तो तीसरी बार (पूर्ण विधि-विधान से) उसी मन्त्र का अनुष्ठान कर देने पर उसकी सिद्धि में कोई सन्देह नहीं रह जाता अर्थात् वह मन्त्र अवश्यमेव सिद्ध होकर रहता है॥३॥

पुनः सोऽनुष्ठितो मंत्रो यदि सिद्धो न जायते।
उपायास्तत्र कर्त्तव्याः सप्त रावण प्रेमतः ॥४॥

हे रावण! यदि (किन्हीं कारणों तथा त्रुटियों आदि के कारण) तीसरी बार अनुष्ठान करने पर भी मन्त्र सिद्ध न हो तो सात उपाय (जो आगे बताये जायेंगें उन्हें) प्रेमपूर्वक करना चाहिए॥४॥

भ्रामणं रोधनं वश्यं पीडनं शोषपोषणे।
दाहनान्तं क्रमात्कुर्यात्ततः सिद्धो भवेन्मनुः ॥५॥

भ्रामण, रोधन, वशीकरण, पीडन, शोषण, पोषण तथा दाहन—इन सात उपायों को क्रमशः करने पर मन्त्र अवश्य सिद्ध हो जाता है॥५॥

भ्रामणं वायुबीजेन ग्रथनं क्रमयोगतः।
यन्त्रे त्वालिख्य तन्मन्त्रं शिल्हकर्पूरकुङ्कुमैः ॥६॥
उशीरचन्दनाभ्यां तु मन्त्रं संग्रथितं लिखेत्।
क्षीराज्यमधुतोयानां मध्ये तल्लिखितं भवेत् ॥७॥
पूजनाज्जपनाद्धोमाद्भ्रमितः सिद्धिदो भवेत् ॥८॥

(हे रावण!) वायुबीज अर्थात् वं से मन्त्र के सम्पूर्ण वर्णों को अर्थात् पहले वं बाद में मन्त्र का पहला अक्षर पुनः वं और बाद में मन्त्र का दूसरा अक्षर, इस प्रकार के क्रम से मन्त्र के सभी अक्षरों को शिलारस, कपूर, केशर (कुंकुम) खस और चन्दन से यन्त्र पर लिखकर फिर इस लिखित मन्त्र को दूध, घृत, शहद तथा पानी में डालकर फिर पूजन, जप तथा हवन कर देने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। यही मन्त्र का भ्रामण कहलाता है॥६-८॥

भ्रामितो नैव सिद्धः स्याद्रोधनं तस्य कारयेत्।
सारस्वतेन बीजेन संपुटीकृत्य संजपेत् ॥
एवं रुद्धो भवेत्सिद्धो न चेदेतद्वशीकुरु ॥९॥

यदि भ्रामण द्वारा भी मन्त्र की सिद्धि न हो तो मंत्र का रोधन (नामक उपाय) करना चाहिए। मन्त्र को सारस्वत बीज अर्थात् ऐं का संपुट कर अर्थात् मन्त्र के आदि तथा अन्त में ऐं का उच्चारण कर मन्त्र का जप करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। यदि रोधन द्वारा भी मन्त्र सिद्ध न हो तो वशीकरण (नामक उपाय) साधक मनुष्य को करना चाहिए॥९॥

अलक्तं चन्दनं कुष्ठं हरिद्रा मादनं शिला।
एतैस्तु मन्त्रमालिख्य भूर्जपत्रे सुशोभने॥
धार्यः कंठे भवेत्सिद्धः पीडनं वाऽस्य कारयेत्॥१०॥

अलक्तक, रक्त चन्दन, कूठ (कुष्ठ) हलदी, धतूरे का बीज (मादन) शिला (मनःशिला अर्थात् लाल संखिया विष) से सुन्दर भोजपत्र पर मंत्र को लिखकर गले में धारण करना मंत्र का वशीकरण कहा जाता है। ऐसा करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। यदि इस वशीकरण उपाय से भी मन्त्र सिद्ध न हो तो पीडन नामक उपाय साधक को करना चाहिए॥१०॥

अधरोत्तरयोगेन[१] पदानि परिजप्य वै।
ध्यायेच्च देवतां तद्वदधरोत्तररूपिणीम्॥११॥
विद्यामादित्यदुग्धेन लिखित्वाऽऽक्रम्य चांघ्रिणा।
तथाभूतेन मन्त्रेण होमः कार्यो दिनेदिने।
पीडितो लज्जयाऽऽविष्टः सिद्धः स्यादथ पोषयेत्॥१२॥

अधरोत्तर योग से मन्त्रपदों को जपकर, अधरोत्तररूपिणी देवी की पूजा कर, आदित्य (अर्क, मदार) के दूध से मन्त्र लिखकर दोनों पैरों से आक्रमण कर प्रतिदिन हवन करना ही मन्त्र का पीडन कहलाता है। इस प्रकार पीड़ा और लज्जा से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। फिर भी यदि मन्त्र

अधरोत्तर योग—पहले अनुलोम और बाद में विलोम अर्थात् सीधे और उल्टे क्रम से मन्त्राक्षरों का जप अधरोत्तर योग कहलाता है।

सिद्ध न हो तो मन्त्र को सिद्ध करने हेतु साधक को पोषण नामक उपाय करना चाहिए।।११-१२।।

बालायास्त्रितयं बीजमाद्यन्ते तस्य योजयेत् ।
गोक्षीरमधुनाऽऽलिख्य विद्यां पाणौ विधारयेत् ।।
पोषितोऽयं भवेत्सिद्धो न चेत्कुर्वीत शोषणम् ।।१३।।

मन्त्र के प्रारम्भ और अन्त में तीन बालाबीज (ऐं ह्रीं श्रीं) मिलाकर साधक को मन्त्र का जप करना चाहिए तथा गाय के दूध एवं शहद से (भोज पत्र पर) मन्त्र लिखकर हाथ में धारण करना ही मन्त्र का पोषण कहलाता है। इस पोषण उपाय से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। यदि फिर भी मन्त्र सिद्ध न हो तो शोषण (नामक उपाय) प्रयोगकर्त्ता को करना चाहिए।।१३।।

द्वाभ्यां तु वायुबीजाभ्यां मन्त्रं कुर्याद्विदर्भितम् ।
एषा विद्या गले धार्या लिखित्वा वरभस्मना ।
शोषितश्चाप्यसिद्धश्चेद्दहनीयोऽग्निबीजतः ।।१४।।

मन्त्र को वायुबीज अर्थात् 'वं' से संपुटित कर जप करना चाहिए और यज्ञ (वरभस्म) की राख से भोजपत्र पर मन्त्र को लिखकर गले में धारण करना मन्त्र का शोषण नामक उपाय कहा जाता है। शोषण नामक उपाय से भी यदि मन्त्र सिद्ध न हो तो मन्त्र का दाहन नामक उपाय साधक को अग्निबीज से करना चाहिए।।१४।।

आग्नेयेन तु बीजेन मन्त्रेष्वेकैकमक्षरम् ।
आद्यन्तमध्ये ह्यूर्ध्वं योजयेद्दाहकर्मणि ।।१५।।

ब्रह्मावृक्षस्य तैलेन मंत्रमालिख्य धारयेत् ।
स्कन्धेदेशे ततो मंत्रः सिद्धः स्याच्छङ्करोदितः ।।१६।।

दाहन कर्म में साधक को आग्नेय बीज अर्थात् 'रं' बीज से मन्त्र के प्रत्येक अक्षर के आदि, मध्य तथा अन्त में लगाकर जप करने तथा ब्रह्म

वृक्ष (ढाक) के बीजों के तेल से भोजपत्र पर मन्त्र लिखकर स्कन्ध में धारण करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है, यह भगवान् शंकर का कथन है।।१५-१६।।

इत्येवं कथितं सम्यक्केवलं तव भक्तितः।
एकेन तु कृतार्थः स्याद्बहुभिः किमु रावण ।।१७।।

(भगवान् शंकर ने कहा) हे रावण! केवल तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न होकर मैनें इन सात उपायों को (तुम्हें) बतलाया है। (सात उपायों में से) एक के ही अनुष्ठान से यदि मन्त्र सिद्ध हो जाय तो सभी को करने की कोई आवश्यकता नहीं है।।१७।।

रावण उवाच

देवदेव महेशान कृपां कृत्वा ममोपरि।
लक्षणं मन्त्रसिद्धेस्तु ब्रूहि मे भक्तवत्सल ।।१८।।

रावण ने पुनः प्रश्न किया

हे देवों के देव! हे महेशान!, हे भक्तवत्सल! मुझ पर कृपा करके मुझे मन्त्रसिद्धि का लक्षण बताइये अर्थात् मन्त्र सिद्ध हो गया है, इसका पता कैसे चलेगा? कौन से लक्षण मन्त्र सिद्धि को ज्ञापित करने वाले हैं?।।१८।।

शिव उवाच

मनोरथानामक्लेशसिद्धिरुत्तमलक्षणम् ।
मृत्युनां हरणं तद्वद्देवतादर्शनं तथा ।।१९।।

शिव जी ने कहा

(हे रावण!) मनोरथों की बिना कष्ट के सिद्धि ही मन्त्र सिद्धि का उत्तम लक्षण है अर्थात् साधना करने वाले की जिस समय जो मनोकामना हो उस समय वह बिना किसी प्रयत्न अथवा कष्ट के पूरी हो जाय तो समझ लेना चाहिए कि मन्त्र सिद्ध हो गया है और मृत्यु का नाश तथा देवता का दर्शन मन्त्र के सिद्ध होने का सूचक है।।१९।।

प्रयोगस्याक्लेशसिद्धिः सिद्धेस्तु लक्षणं परम्।
परकायप्रवेशश्च पुरप्रावेशनं तथा॥
ऊर्ध्वोत्क्रमणमेवं हि चराचरपुरे गतिः॥२०॥

प्रयोग की बिना कष्ट के सिद्धि ही सिद्ध होने का श्रेष्ठ लक्षण है। ऐसा सिद्ध व्यक्ति दूसरे के शरीर में प्रवेश और पुर (किले) में प्रवेश कर सकता है। (उस सिद्ध व्यक्ति को) आकाश में उड़ने की तथा चराचर सम्पूर्ण जगत् में आने-जाने की शक्ति प्राप्त हो जाती है॥२०॥

खेचरीमेलनं चैव तत्कथाश्रवणादिकम्।
भूच्छिद्राणि प्रपश्येत्तु तत्त्वमस्य च लक्षणम्॥२१॥

ऐसा सिद्ध व्यक्ति आकाश में गमन करने वाली देवियों से मिलकर उनके वार्तालाप को सुन सकता है। ऐसे व्यक्ति को पृथिवी तत्त्व के अवगुणों का ज्ञान हो जाना मन्त्र के सिद्ध होने का लक्षण (अर्थात् सार) है॥२१॥

ख्यातिर्वाहनभूषणादिलाभः सुचिरजीवनम्।
नृपाणां तद्गणानां च वशीकरणमुत्तमम्॥२२॥

ऐसे सिद्ध व्यक्ति को प्रसिद्धि अर्थात् यश, अनेक वाहन, भूषणादि, अतिदीर्घ जीवन प्राप्त होता है। वह राजा तथा उसके मन्त्रियों आदि का प्रिय पात्र बन जाता है, ऐसा व्यक्ति राजा तथा राजपरिवार के लोगों को अपने वश में कर सकता है॥२२॥

सर्वत्र सर्वलोकेषु चमत्कारकरः सुखी।
रोगापहरणं दृष्ट्या विषापहरणं तथा॥२३॥

ऐसा सिद्ध व्यक्ति प्रत्येक स्थान पर और सम्पूर्ण लोकों में चमत्कार करने वाला तथा आनंद और सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने वाला होता है। ऐसे सिद्ध आदमी के दर्शन मात्र से समस्त रोग और विष तथा विघ्न-बाधायें (स्वतः) नष्ट हो जाती हैं॥२३॥

पाण्डित्यं लभते मन्त्री चतुर्विधमयत्नतः ।
वैराग्यं च मुमुक्षुत्वं त्यागितां सर्ववश्यताम् ॥२४॥

मन्त्र को सिद्ध कर लेने वाला ऐसा व्यक्ति (मन्त्री) बिना किसी प्रयत्न के चारों प्रकार के पाण्डित्य को प्राप्त कर लेता है अर्थात् सर्वशास्त्रविद् हो जाता है। उसमें त्याग, वैराग्य अर्थात् विषयोपभोग में इच्छा के अभाव की शक्ति, मुमुक्षुत्व अर्थात् मोक्ष प्राप्त करने की शक्ति और सभी को अपने वश में करने की शक्ति उत्पन्न हो जाती है॥२४॥

अष्टांगयोगाभ्यसनं भोगेच्छापरिवर्ज्जनम् ।
सर्वभूतेष्वनुकम्पा सार्वज्ञादिगुणोदयः ॥
इत्यादि गुणसंपत्तिर्मध्यसिद्धेस्तु लक्षणम् ॥२५॥

अष्टाङ्गयोग का अभ्यास, विषयोपभोग की अभिलाषा का नाश होना, सभी प्राणियों पर अनुकम्पा करना तथा सर्वस्व जान लेने की शक्ति.का उदय हो जाना, इन सभी गुणों से सम्पन्न होने वाले व्यक्ति को 'मध्यमसिद्धिप्राप्त' समझना चाहिए॥२५॥

ख्यातिर्वाहनभूषणादिलाभः सुचिरजीवनम् ।
नृपाणां तद्गणानां च वात्सल्यं लोकवश्यता ॥२६॥
महैश्वर्यं धनित्वं च पुत्रदारादिसम्पदः ।
अधमाः सिद्धयः प्रोक्ता मंत्रिणामाद्यभूमिकाः ॥२७॥

अधमसिद्धि प्राप्त होने वाले व्यक्ति को यश, वाहन, भूषणादि (धन-संपत्ति) की प्राप्ति होती है। वह दीर्घ जीवन वाला होता है, राजा तथा सम्पूर्ण राजपरिवार उससे प्रेम करते हैं, वह समस्त संसार को अपने वश में करने वाला होता है, ऐसा व्यक्ति महा ऐश्वर्य और धन सम्पत्ति को प्राप्त करने वाला तथा पुत्र-पौत्रादि से सम्पन्न होता है। मन्त्रों की सिद्धि की आदि अवस्था में उपर्युक्त सभी लक्षण दिखाई पड़ते हैं। उक्त सभी लक्षण अधम सिद्धि के सूचक हैं। ।२६-२७॥

सिद्धमन्त्रस्तु यः साक्षात्स शिवोनात्र संशयः ॥२८॥

मन्त्र को सिद्ध करने वाला साधक साक्षात् शिव ही होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है॥२८॥

रावण उवाच

देवदेव महादेव पार्वतीप्राणवल्लभ।
इदानीं मन्त्रदोषांस्तु कथयस्व कृपानिधे ॥२९॥

रावण ने पूछा (रावण ने कहा)

हे देवों के देव! हे महादेव! हे पार्वती के प्राण प्रिय! हे कृपानिधे! अब मन्त्रों के दोषों को आप (मुझे) बतलाइये॥२९॥

शिव उवाच

राक्षसाधिप अत्रैव मंत्रदोषो निरूप्यते।
तत्सर्वं शृणु विप्र त्वमेकचित्तेन चेतसा ॥३०॥

भगवान् शंकर ने कहा

(भगवान् शिव ने कहा) हे रावण! हे ब्राह्मण! अब मन्त्रों के दोषों को बताने जा रहा हूँ, इसलिए तुम उन्हें एकाग्रचित से सुनो॥३०॥

छिन्नो रुद्धः शक्तिहीनः पराङ्मुख उदीरितः।
बधिरो नेत्रहीनश्च कीलितः स्तंभितस्तथा ॥३१॥

दग्धः स्त्रस्तश्च भीतश्च मलिनश्च तिरस्कृतः।
भेदितश्च सुषुप्तश्च मदोन्मत्तश्च मूर्च्छितः ॥३२॥

हतवीर्यश्च हीनश्च प्रध्वस्तो बालकः पुनः।
कुमारस्तु युवा प्रौढो वृद्धोनिस्त्रिंशकस्तथा ॥३३॥

निर्वीर्यः सिद्धिहीनश्च मन्दः कूटस्तथा पुनः।
निरंशकः सत्वहीनः केकरो बीजहीनकः ॥३४॥

धूमितालिङ्गितौ स्यात्तां मोहितस्तु क्षुधार्त्तकः।
अतिदृप्तोऽङ्गहीनः स्यादतिक्रुद्धः समीरितः ॥३५॥

अतिक्रूरश्च सव्रीडः शान्तमानस एव च।
स्थानभ्रष्टश्च विकलो निःस्नेहः परिकीर्त्तितः ॥३६॥

अतिवृद्धः पीडितश्च वक्ष्याम्येषां च लक्षणम् ॥३७॥

छिन्न, रुद्ध, शक्तिहीन, पराङमुख, बधिर, नेत्रहीन, कीलित, स्तम्भित, दग्ध, स्रस्त, भीत, मलिन, तिरस्कृत, भेदित, सुसुप्त, मदोन्मत्त, मूर्च्छित, हृतवीर्य, हीन, प्रध्वस्त, बालक, कुमार, युवा, प्रौढ़, वृद्ध, निस्त्रिंशक, वीर्यरहित, सिद्धि रहित, मन्द, कूट, निरंशक, सत्त्वहीन, केकर, जीवहीन, धूमित, आलिङ्गित, मोहित, क्षुधार्तक, अतिदृप्त, अङ्गहीन, अतिक्रुद्ध, अतिक्रूर, लज्जायुक्त, शान्तचित्त, स्थान भ्रष्ट, निकल, स्नेहशून्य, अतिवृद्ध तथा पीड़ित सभी मन्त्रों को दोष युक्त समझना चाहिए। अब क्रमशः इनके लक्षणों को बता रहा हूँ। (इसलिए तुम उनको अत्यन्त सावधानीपूर्वक, स्थिर चित्त होकर समझ लो)॥३१-३७॥

मनोर्यस्यादिमध्यान्तेष्वानिलं बीजमुच्यते।
संयुक्तं वारियुक्तं वा पुराक्रान्तं त्रिधा पुनः॥
चतुर्द्धा पञ्चधा वापि स मन्त्रश्छिन्नसंज्ञकः ॥३८॥

जिस मन्त्र के आदि, मध्य और अन्त में 'वं' या 'यं' बीज हो (वं या यं को अनिल बीज कहते हैं), जो पुनः तीन प्रकार का हो—संयुक्त, वारियुक्त और पुराक्रान्त, अथवा चतुर्धा और पञ्चधा स्वर सम्पन्न हो, वह मन्त्र छिन्न संज्ञावाला माना जाता है॥३८॥

आदिमध्यावसानेषु भूबीजद्वयलक्षितः।
रुद्धमंत्रः स विज्ञेयो भुक्तिमुक्तिविवर्जितः ॥३९॥

जिस मन्त्र के आदि, मध्य और अन्त में दो भूबीज अर्थात् 'लं' हो, वह

रुद्ध मन्त्र कहलाता है। रुद्ध मन्त्र भुक्ति अथवा मुक्ति से शून्य होता है अर्थात् भोग और मोक्ष दोनों को प्रदान करने में अशक्त होता है॥३९॥

मायात्रितत्त्वश्रीबीजऐंविहीनश्च यो मनुः।
शक्तिहीनः स कथितो यस्य मध्ये न वर्त्तते॥४०॥

जिस मंत्र के मध्य में मायात्रितत्त्व अर्थात् 'ह्रीं', 'औं', 'श्रीं' और 'ऐं' बीज न हों उसे शक्तिहीन मंत्र कहा जाता है॥४०॥

कामबीजं मुखे माया शिरस्यंकुशमेव च।
असौ पराङ्मुखः प्रोक्तो हकारो बिन्दुसंयुतः॥४१॥

जिस मंत्र के आदि में 'ह्रीं', मध्य अर्थात् मुख में कामबीज अर्थात् 'क्लीं' तथा शिर में अर्थात् अन्त में अंकुश अर्थात् 'क्रीं' बीज तथा बिन्दु संयुक्त हकार अर्थात् 'हं' हो तो वह मन्त्र पराङ्मुख कहलाता है॥४१॥

आद्यन्तमध्येष्विंदुर्वा स भवेद्बधिरः स्मृतः॥४२॥

पंचवर्णो मनुर्यः स्याद्रेफार्केन्दुविवर्ज्जितः।
नेत्रहीनः स विज्ञेयो दुःखशोकामयप्रदः॥४३॥

यदि किसी मन्त्र के आदि, मध्य और अन्त में 'हं' अथवा 'सं' बीजाक्षर हो तो वह बधिर मन्त्र माना जाता है। पंचाक्षर और रेफ, अर्क अर्थात् 'स' तथा इन्दु अक्षर अर्थात् 'श' से रहित जो मन्त्र होता हैं वह नेत्रहीन कहलाता है। नेत्रहीन मंत्र की साधना से दुःख, शोक तथा रोगों की प्राप्ति होती है॥४२-४३॥

आदिमध्यावसानेषु हंसः प्रासादवाग्भवौ।
बिन्दुयुक्तं हकारं वा फट्कारं वा तथैव च॥४४॥

अंकुशं च तथा मायां नमामि च ततः परम्।
स एव कीलितो मंत्रः सर्वसिद्धिविवर्जितः॥४५॥

जिस मन्त्र के आदि, मध्य और अन्त में 'हं' 'सः' 'हौं', 'ऐं', (प्रसाद बीज = हौं, वाग्भव बीज = ऐं) बिन्दुयुक्त हकार अर्थात् 'फट्' 'हं' और अंकुश अर्थात् क्रौं, माया अर्थात् ह्रीं तथा नमामि हो तो उसी को कीलित मंत्र कहा जाता है। कीलित मंत्र की साधना करने से किसी भी सिद्धि की प्राप्ति नहीं होती है अर्थात् यह सम्पूर्ण सिद्धियों से रहित मन्त्र है।।४४-४५।।

एकं मध्ये द्वयं मूर्ध्नि यस्मिन्नस्त्रिपुरन्दवौ ।
न विद्यते स मंत्रस्तु स्तंभितः सिद्धिवर्ज्जितः ।।४६।।

जिस मन्त्र के मध्य में एकाक्षर 'लं' तथा आदि में द्वयाक्षर अर्थात् 'फट्' हो तथा अन्त में दोनों बीजाक्षरों में से एक भी न हो तो वह मन्त्र स्तम्भित कहलाता है। स्तम्भित मन्त्र को जपने पर किसी भी प्रकार की सिद्धि साधक को नहीं मिलती है।।४६।।

वह्निर्वायुसमायुक्तो यस्य मन्त्रस्य मूर्द्धनि ।
सप्तधा दृश्यते तं तु दग्धमन्त्रं प्रचक्षते ।।४७।।

जिस मंत्र के शिर में वायु तथा अग्नि अक्षर हो तथा सात वर्णवाले मंत्र में र तथा य अक्षर होने पर वह दग्धमन्त्र कहलाता है।।४७।।

अत्र द्वाभ्यां त्रिभिः षड्भिरष्टभिर्दृश्यतेऽक्षरैः ।
स्त्रस्तः स कथितो मन्त्रः सर्वसिद्धिविवर्ज्जितः ।।४८।।

दो अक्षर, तीन अक्षर, छः अक्षर, आठ अक्षर और 'फट्' से संयुक्त मन्त्र स्त्रस्त मन्त्र कहलाता है। स्त्रस्त मंत्र के जप से किसी भी प्रकार की सिद्धि नहीं मिलती है।।४८।।

यस्य नास्ति मुखे माया प्रणवो वा विधानतः ।
भीतः स कथितो मन्त्रः सर्वसिद्धिविवर्ज्जितः ।।४९।।

जिस मन्त्र के आदि में माया (ह्रीं) अथवा प्रणव (ओंकार) नियमतः न हो वह भीत मन्त्र कहा जाता है। भीत मंत्र सभी प्रकार की सिद्धियों से रहित

होता है अर्थात् भीत मन्त्रों को जपने पर साधक की कोई भी सिद्धि नहीं मिलती है।।४९।।

आदौ मध्ये तथा चान्ते यस्य वर्णचतुष्टयम्।
स एव मलिनो मन्त्रः सर्वविघ्नसमन्वितः ।।५०।।

जिस मन्त्र के आदि, मध्य तथा अन्त में चार-चार अक्षर विद्यमान हों उसे ही मलिन मंत्र कहते हैं। मलिन मंत्र का जप समस्त विघ्न बाधाओं को प्रदान करने वाला होता है।।५०।।

यस्य मध्ये दकारो वा कवचं मूर्ध्नि दृश्यते।
त्रिविधं दृश्यते चास्त्रं तिरस्कृत उदाहृतः ।।५१।।

मध्य में 'द', आदि में 'हूँ' तथा अन्त में फट्कार तथा तीन प्रकार के अस्त्र वर्णवाला मन्त्र तिरस्कृत माना जाता है।।५१।।

हृद्वय हृदये शीर्षे वषट् वौषट् च मध्यतः।
स एव भेदितो मन्त्र, सर्वशास्त्रविवर्ज्जितः ।।५२।।

जिस मन्त्र के हृदय में दो 'हकार', शिर में 'वषट्' तथा मध्य में वौषट् हो वह मन्त्र भेदित मन्त्र कहलाता है और सभी शास्त्रों से रहित होता है। भेदित मन्त्र का अनुष्ठान किसी भी मनुष्य को नहीं करना चाहिए।।५२।।

त्रिवर्णो हंसहीनो यः स सुषुप्त उदाहृतः ।।५३।।

तीन अक्षर वाले मन्त्र में यदि हंस बीज न हों तो वह सुसुप्त मन्त्र कहलाता है।।५३।।

मन्त्रो वाप्यथवा विद्या सप्ताधिकदशाक्षरः।
फट्कारपञ्चकादिर्यो मदोन्मत्त उदाहृतः ।।५४।।

स्त्री देवता अथवा पुरुष देवता परक मन्त्र अथवा विद्या सत्रह वर्णोंवाला और फट्कार पञ्चकादि वाला हो तो वह मदोन्मत्त मन्त्र कहलाता है।।५४।।

सप्तदशाक्षरो मन्त्रो मध्ययेऽर्द्धं च यदा भवेत्।
मूर्च्छितः कथितो मन्त्रः सर्वसिद्धिविवर्जितः ॥५५॥

सत्रह वर्णों वाले मन्त्र के मध्य जब फट्कार (अर्ध) हो तो उस मन्त्र को मूर्च्छित मन्त्र कहते हैं। इस मूर्च्छित मन्त्र के अनुष्ठान से किसी भी प्रकार की सिद्धि (साधकों को) नहीं मिलती है॥५५॥

पञ्च फट् यस्य मन्त्रस्य विरामस्थानसंयुतः।
हृतवीर्यः स कथितो नास्ति तेन प्रयोजनम्॥५६॥

जिस मन्त्र के अन्त में पञ्च फट्कार हो उसे हृतवीर्य मन्त्र कहते हैं। इस मन्त्र के अनुष्ठान से कोई कार्य सिद्ध नहीं होता है। अतः इसे नहीं जपना चाहिए॥५६॥

आदौ मध्ये तथा चान्ते चतुरस्त्रयुतो मनुः।
स एव हीनमन्त्रः स्यात्तथा चाष्टादशाक्षरः॥५७॥

जिस मन्त्र के आदि, मध्य तथा अन्त में चार फट्कार (अस्त्र) हों तथा वह मन्त्र अट्ठारह वर्णोंवाला हो तो वही हीन मंत्र कहलाता है॥५७॥

एकोनविंशो यो मन्त्रस्तारवर्णसमन्वितः।
हृल्लेखाङ्कुशबीजाढ्यं प्रध्वस्तं तं प्रचक्षते॥५८॥

इक्कीस अक्षरों वाला मन्त्र यदि 'ॐ' तारवर्ण से समन्वित हो और 'ह्रां' तथा 'क्रों' (हृतलेख अंकुश) बीज हों तो वह प्रध्वस्त मन्त्र कहलाता है॥५८॥

सप्तवर्णः स्मृतो बालः कुमारोऽष्टाक्षरः स्मृतः।
षोडशवर्णो युवा मंत्रः सर्वसिद्धिविवर्जितः॥५९॥

सप्ताक्षर मन्त्र को 'बाल', अष्टाक्षर को 'कुमार' तथा षोडशाक्षर मन्त्र को 'युवा' मन्त्र कहते हैं। ये तीनों ही प्रकार के मन्त्र सभी सिद्धियों से रहित होते हैं अतः इन तीनों ही प्रकार के मन्त्रों का अनुष्ठान साधक को नहीं करना चाहिए॥५९॥

चतुर्विंशल्लिपिर्यः स्यात्प्रौढः स परिकीर्तितः ॥६०॥

चौबिस अक्षरवाले मन्त्र को प्रौढ़ मन्त्र कहते हैं। प्रौढ़ मन्त्र की भी उपासना नहीं करनी चाहिए॥६०॥

त्रिंशद्वर्णश्चतुःषष्टिवर्णो मंत्रः शताक्षरः ।
चतुःशताक्षरश्चापि वृद्धः स परिकीर्त्तितः ॥६१॥

तीस अक्षरों, चौंसठ अक्षरों, एक सौ अक्षरों तथा चार सौ अक्षरोंवाले मन्त्रों को 'वृद्ध' मन्त्र कहते हैं। इसकी भी उपासना नहीं करनी चाहिए॥६१॥

नवाक्षरो ध्रुवयुतो मनुर्निस्त्रिंश ईरितः ॥६२॥

नव अक्षरोंवाले ध्रुवयुक्त मन्त्र को निस्त्रिंश मन्त्र कहा जाता है। इसकी भी उपासना मनुष्य को नहीं करनी चाहिए॥६२॥

यस्यावसाने हृदयं शिवमन्त्रौ च मध्यतः ।
शिखा वर्म च न स्यातां वौषट् फट्कार एव च ॥
शिवशक्त्यवहीनो वा स निर्वीर्य उदाहृतः ॥६३॥

जिस मन्त्र के अन्त में नमः, मध्य में स्वाहा तथा वषट् और हूँ (बीज) न हो, वौषट् फट्कार युक्त हो अथवा शिवशक्ति वर्ण विहीन हो तो वह मन्त्र 'निर्वीर्य' मन्त्र कहलाता है। निर्वीर्य मन्त्र की उपासना से कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता है॥६३॥

एषु स्थानेषु फट्कारः प्रौढो यस्मिन्प्रदृश्यते ।
स मन्त्रः सिद्धिहीनःस्यान्मन्दः पंक्त्यक्षरोमनुः ॥६४॥

जिस मन्त्र के आदि स्थान में छः फट्कार हों वह 'सिद्धिहीन मंत्र' कहलाता है और जिस मन्त्र में दश वर्ण (पंक्ति) दिखाई दे उसे 'मन्द' मंत्र कहते हैं। सिद्धिहीन तथा मन्द मन्त्रों की उपासना से साधक मनुष्य का कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता॥६४॥

कूट एकाक्षरो मन्त्रः स प्रोक्तो निरंशकः ।
द्विवर्णः सत्त्वहीनः स्याच्चतुर्वर्णस्तु केकरः ॥६५॥

एकाक्षर मन्त्र को 'कूट' तथा उसी को 'निरंशक' मन्त्र भी कहा जाता है, दो अक्षरों वाले मन्त्र को 'सत्त्वहीन' तथा चार अक्षरोंवाले मन्त्र को 'केकर' कहा जाता है। इन सभी की उपासना से मनुष्य का कोई कार्य सिद्ध नहीं होता है॥६५॥

षडक्षरो जीवहीनः सार्द्धसप्ताक्षरो मनुः ।
सार्द्धद्वादशवर्णोऽपि धूमितः स तु निन्दितः ॥६६॥

षडाक्षर तथा साढ़े सात अक्षरोंवाले मन्त्र को 'जीवहीन' तथा साढ़े बारह अक्षर वाले मन्त्र को 'धूमित' मन्त्र कहा जाता है। धूमित मन्त्र निन्दित माना गया है॥६६॥

सार्धबीजद्वयं तद्वदेकविंशतिवर्णकः ।
विंशवर्णास्त्रिंशद्वर्णो वा यः स्यादालिङ्गितः स्मृतः ॥६७॥

जिस मन्त्र में ढाई बीज से युक्त, इक्कीस अक्षर, बीस अक्षर अथवा तीस अक्षर होते हैं, वह 'आलिङ्गित' मन्त्र कहलाता है॥६७॥

द्वाविंशत्यक्षरो मन्त्रो मोहितः परिकीर्त्तितः ॥६८॥

बाइस अक्षरोंवाला मन्त्र 'मोहित' मन्त्र माना गया है। मोहित मन्त्र को जपने से मनुष्य को कोई सिद्धि प्राप्त नहीं होती है॥६८॥

चतुर्विंशतिवर्णो यः सप्तविंशतिवर्णकः ।
क्षुधार्त्तः स तु विज्ञेयो द्वात्रिंशद्वर्णसंज्ञकः ॥६९॥

चौबिस, सत्ताइस तथा बत्तीसअक्षरों वाला मन्त्र 'क्षुधार्त्त' मन्त्र कहलाता है। इसकी उपासना मनुष्य को नहीं करनी चाहिए। इस प्रकार के मन्त्रों की उपासना करने पर साधक की कोई भी मनोकामना पूर्ण नहीं हो सकती है॥६९॥

एकादशाक्षरो वापि पञ्चविंशतिवर्णकः ।
त्रयोविंशतिवर्णो वा मन्त्रो दृप्त उदाहृतः ॥७०॥

ग्याहर अक्षर, पचीस अक्षर तथा तेइस अक्षरोंवाले मन्त्र को 'दृप्त' मन्त्र बतलाया गया है॥७०॥

षड्विंशत्यक्षरो मन्त्रः षट्त्रिंशद्वर्णकस्तथा ।
त्रिंशदेकोनवर्णो वा त्वगंहीनः स एव हि ॥७१॥

छब्बिस अक्षर, छत्तिस अक्षर तथा उनतिस अक्षर वाले मन्त्रों को 'अंगहीन' मन्त्र कहते हैं। इसकी भी उपासना नहीं करनी चाहिए॥७१।

अष्टाविंशदक्षरो वा एकविंशदथापि वा ।
अतिक्रुद्धःस विज्ञेयो निन्दितः सर्वकर्मसु ॥७२॥

अट्ठाइस अक्षर अथवा इक्कीस अक्षर वाले मन्त्रों को 'अतिक्रुद्ध' मन्त्र कहा जाता है। यह समस्त प्रकार के कर्मों में निन्दित माना गया है अतः इसकी उपासना नहीं करनी चाहिए॥७२॥

त्रिंशदक्षरको मन्त्रस्त्रयस्त्रिंशदथापि वा ।
अतिक्रूरः स विज्ञेयो निन्दितः सर्वकर्मसु ॥७३॥

तीस अक्षर अथवा तैंतिस अक्षरोंवाले मन्त्रों को 'अतिक्रूर' मन्त्र कहा जाता हैं। यह भी सम्पूर्ण अनुष्ठानों में वर्जित है॥७३॥

चतुर्विंशं समारभ्य त्रिषष्टिर्यावता भवेत् ।
तावत्संख्या निगदिता मन्त्राः सव्रीडसंज्ञकाः ॥७४॥

चौबीस अक्षर से लेकर तिरसठ अक्षर पर्यन्त अक्षरोंवाले मन्त्रों को 'सव्रीड' की संज्ञा दी गई है॥७४॥

पंचषष्ट्यक्षरा ये स्युर्मन्त्रास्ते शान्तमानसाः ॥७५॥

पैंसठ अक्षरोंवाले मन्त्र को 'शान्तमानस' अथवा 'शान्तचित्त' मन्त्र कहते हैं॥७५॥

एकोनशतपर्यंतं पञ्चषष्ट्यक्षरादितः ।
ते सर्वे कथिता मन्त्राः स्थानभ्रष्टा न शोभना ।।७६।।

पैंसठ अक्षरों से लेकर निन्यानबे अक्षरों तक के मन्त्रों को 'स्थानभ्रष्ट' कहा गया है। ये मन्त्र अच्छे नहीं माने जाते। अतः इनकी उपासना मनुष्य को नहीं करनी चाहिए।।७६।।

त्रयोदशाक्षराद्याः स्युर्मन्त्राः पञ्चदशाक्षराः ।
ते सर्वे विकला ज्ञेया शतं सार्द्ध शतं तु वा ।।७७।।
शतद्वयं द्विनवतिरेकहीना तथाऽपि वा ।
यावच्छतद्वयं संख्या निःस्नेहास्ते प्रकीर्तिताः ।।७८।।

तेरह, चौदह तथा पन्द्रह अक्षरोंवाला सभी मन्त्र 'विकल' मन्त्र कहा जाता है। एक सौ वर्णों, डेढ सौ वर्णों, बानबे वर्णों, इक्यानबे वर्णों अथवा दो सौ वर्णोंवाले मन्त्रों को 'निस्नेह' मन्त्र कहा जाता है।

चतुःशतमथारभ्य यावद्वर्णसहस्रकम् ।
अतिवृद्धः स मन्त्रस्तु सर्वशास्त्र विवर्ज्जितः ।।७९।।

चार सौ अक्षरों से लेकर एक हजार तक के अक्षरोंवाले मन्त्र को 'अतिवृद्ध' मन्त्र कहा जाता है। अतिवृद्ध मन्त्र सम्पूर्ण शास्त्रों में वर्जित है। साधक मनुष्य को इसकी उपासना नहीं करना चाहिए।।७९।।

सहस्रवर्णाधिकाः मन्त्रा दण्डकाः पीडिताक्षराः ।।८०।।

एक हजार वर्णों से अधिक वर्णोंवाले मन्त्रों को 'पीड़ित' मन्त्र कहते हैं। इसकी भी उपासना नहीं करनी चाहिए।।८०।।

द्विसहस्राक्षरा मन्त्राः खण्डशः सप्तधाश्रिताः ।
ज्ञातव्याः स्तोत्ररूपास्ते मन्त्रा एते न संशयः ।।
तथा विद्याश्च बोद्धव्या मन्त्रिभिः सर्वकर्मसु ।।८१।।

दो हजार अक्षरोंवाले मन्त्रों को सात खण्डों में विभक्त करना चाहिए तदनन्तर जप करना चाहिए। उक्त सातों भाग स्तोत्ररूप होते हैं। इसमें किसी भी प्रकार के सन्देह की बात नहीं है। सभी प्रकार के अनुष्ठानों में साधक व्यक्ति को मन्त्र तथा विद्या अर्थात् शास्त्र दोनों का ज्ञान करने के बाद ही प्रयोग करना चाहिए।।८१।।

दोषानिमानविज्ञाय यो मन्त्रं भजते बुधः।
सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि ।।८२।।

(हे रावण!) उंपर्युक्त छिन्न.....पीड़ित आदि दोषों को बिना जाने-समझे जो बुद्धिमान् व्यक्ति मन्त्रों की उपासना (भजन, जप) करता है उसे सौ करोड़ कल्पों (एक कल्प=चार युग—सत्, त्रेता, द्वापर और कलियुग) में भी सिद्धि की प्राप्ति नहीं हो सकती।।८२।।

रावण उवाच

भगवंस्त्वत्प्रसादेन मंत्राणां दोषलक्षणम्।
श्रुतं सर्वं विधिं ब्रूहि मन्त्रा दुष्टाः फलप्रदाः ।।८३।।

रावण ने कहा

हे भगवन्! आपके प्रसाद (कृपा) से मैंने मन्त्रों के समस्त दोषों तथा लक्षणों को सुन लिया अर्थात् जान लिया। (अब कृपा करके उस) विधि को बतलाइये जिससे दोषयुक्त मन्त्र भी (दोष मुक्त होकर शुभ) फल प्रदान करें।।८३।।

शिव उवाच

छिन्नादिदुष्टा ये मन्त्रास्ते तन्त्रे च निरूपिताः।
ते सर्वे सिद्धिमायान्ति मातृकव्यावर्णप्रभावतः ।।८४।।

भगवान् शंकर ने कहा

(हे रावण!) छिन्नादि दोषों से युक्त जो मन्त्र हैं उन सभी का तन्त्रशास्त्र

में वर्णन किया गया है। वे सभी दूषित मन्त्र मातृकावर्ण के प्रभाव से वे सभी सिद्धि प्रदान करनेवाले बन जाते हैं॥८४॥

मातृकावर्णैः[१] पुटीकृत्य मन्त्रं विद्याद्विशेषतः ॥८५॥
शतमष्टोत्तरं पूर्वं प्रजपेत्फलसिद्धये ।
तदा मन्त्रो महाविद्या यथोक्तफलदो भवेत् ॥८६॥

मन्त्र अथवा विद्या को विशेष रूप से मातृका वर्ण से संपुटित करके अर्थात् मन्त्र के वर्णों के पहले तथा अन्त में मातृकाक्षर को लगा-लगाकर एक सौ आठ बार (विधि-विधान पूर्वक) फल की सिद्धि के लिए मन्त्र का जप करे तो मन्त्र और विद्या का 'छिन्नादि' दोष समाप्त हो जाता है तथा मन्त्र और विद्या यथोक्त फल प्रदान करनेवाले बन जाते हैं॥८५-८६॥

बध्वा तु योनिमुद्रां तां संकोच्याधारपङ्कजम् ।
तदुत्पन्नान्मन्त्रवर्णान्कुर्वतश्च गतागतान् ॥८७॥
ब्रह्मरन्ध्रावधि ध्वात्वा वायुमापूर्य कुम्भयेत् ।
सहस्रं प्रजपेन्मन्त्री मन्त्रदोषप्रशान्तये ॥८८॥

योनिमुद्रा को बाँधकर, आधार कमल को संकुचित करके, मूलाधार से उत्पन्न समस्त अक्षरों के ब्रह्मरन्ध्र तक आवागमन करते हुए का ध्यान करके, बाद में वायु भरकर कुम्भक (प्राणायाम) करना चाहिए। तत्पश्चात् मन्त्रदोष को समाप्त करने के लिए मन्त्रसाधक को विधि-विधानपूर्वक एक हजार बार मन्त्र का जप करना चाहिए। ऐसा करने पर मन्त्रदोष समाप्त हो जाते हैं॥८७-८८॥

एषु दोषेषु प्राप्येषु मायां काममथापिवा ।
क्षिप्त्वा चादौ श्रियं चैव तद्दूषणविमुक्तये ॥८९॥

---

१. सर्वप्रथम मातृकावर्ण पुनः मन्त्र का वर्ण और फिर मातृका वर्ण—साधक मनुष्य को इसी प्रकार से संपुटित करके मन्त्र का जप करना चाहिए।

यदि मन्त्र दोषों से युक्त हों तो पहले मायाबीज, कामबीज तथा श्रीबीज को मिलाकर (विधिपूर्वक) मन्त्र का जप करने से मन्त्र का दोष समाप्त हो जाता है॥८९॥

रावण उवाच

भगवच्छ्रोतुमिच्छामि जायते च कुतहलम्।
पादुकागुटिकासिद्धिं भ्रमणं च जलोपरि ॥९०॥
मृतसंजीविनीविद्यामदृश्योपायमुत्तमम्।
सम्यक्कथय मे सर्वं कृपां कृत्वा दयानिधे ॥९१॥

रावण ने कहा

हे भगवन्! पादुका और गुटिका की सिद्धि, पानी पर चलने की सिद्धि, मृतसञ्जीवनी विद्या तथा अदृश्य (अथवा अन्तर्ध्यान) होने के उत्तम उपाय को सुनना चाहता हूँ, (इनके विषय में जानने की) उत्कण्ठा हो रही है। हे दयानिधे! (मेरे ऊपर) कृपा करके उपर्युक्त सभी के बारे में मुझे पूर्णरूप से बताइये॥९०-९१॥

शंकर उवाच

क्रमतः संप्रवक्ष्यामि शृणु रावण यत्नतः ॥९२॥

शंकरजी ने कहा

हे रावण! मैं क्रम से सभी को तुम्हें बता रहा हूँ। तुम अत्यन्त सावधानी से (उनको) सुनो॥९२॥

पादुकासाधनमन्त्र

'ॐनमश्चन्द्रमसे चन्द्रशेखर नमो भगवते तिष्ठ नमो भगवते नमः शिखरे नमः शूलिने नमः पादप्रचारिणे वेगिने हुं फट् स्वाहा॥' त्रिलक्षजपेन सिद्धिः।

पादुकासाधन मन्त्र

'ॐनमश्चन्द्रमरो चन्द्रशेखर नमो भगवते तिष्ठ नमो भगवते नमः शिखरे नमः शूलिने नमः पादप्रचारिणे वेगिने हुं फट् स्वाहा'—पादुका साधन के उपर्युक्त मन्त्र को पूरे विधि-विधान से तीन लाख बार जप कर सिद्ध कर लेने के पश्चात् साधक को कर्म में अग्रसर होना चाहिए।

सारिकाया वसां नेत्रमंत्राणि रुधिरं तथा।
काकपित्तं तथा नेत्रं हरिचन्दनवेतसम् ॥९३॥

शुनो मज्जां वसां तुल्यमुष्ट्रीक्षीरेण भावयेत्।
पादलेपः प्रकर्त्तव्यो नमस्कृत्य शिवं तथा ॥९४॥

योजनं लक्षमेकं तु निमिषार्द्धेन गच्छति।
गगनाशेषचारी च क्रीडत्येव यथा शिवः ॥९५॥

मैना (सारिका) की चर्बी, आँख, आंत तथा खून, कौवे का पित्ताशय तथा नेत्र, हरिचन्दन (केशर) तथा वेंत की लता, कुत्ते की मज्जा तथा चर्बी को बराबर मात्रा में लेकर ऊँटिनी के दूध में पीसकर, भगवान् शंकर को प्रणाम कर उपर्युक्त द्रव्य को उपर्युक्त मन्त्र से अभिमंत्रित करके दोनों पैरों में पोत लेने पर आधे क्षण में वह व्यक्ति एक लाख योजन की दूरी तक जा सकता है और भगवान् शंकर के समान आकाश में भ्रमण तथा लीला करनेवाला हो सकता है॥९३-९४-९५॥

गुटिकासाधन

साधकश्चिल्हालयं गत्वा नित्यं तस्मै निवेदयेत्।
देवताबुद्ध्याऽतिभक्त्या भक्षणार्थं किञ्चित्किञ्चिदाममांसं निक्षिपेत् यावत् प्रसूता भवति। ततः पारदरसं सार्द्धनिष्कत्रयं कस्मिंश्चिन्नालिकाद्वये निक्षिपेत्। तस्याधरोर्ध्वच्छिद्रं सिक्थकेन रुद्ध्वा चिल्हालयं गत्वा अंडद्वयस्योपरि नालिकाद्वयं निधाय

लौहशलाकया नालिकामध्यमार्गेण तद्दंडं लघुहस्तेन वेधयित्वा शलाकामुद्धरेत्। तेनैव मार्गेण अंडमध्ये यथा रसो गच्छति तथा यत्नं कुर्यात्। ततश्छिद्रं चिल्हाविष्ठया लिपेत्। ततस्तद्वृक्षाधो नित्यमतिबल्युपहारेण पूजां कुर्यात्। यावत्स्वय-मेवाण्डानि स्फुटंति तावन्नित्यमुपरि गत्वा वीक्षयेत्। स्फुटिते सति गुटिकाद्वयं ग्राह्यम्। ततो वृक्षादुत्तीर्य यो मिलति मनुष्यस्तस्मै एका देया अपरां स्वयं मुखे धारयेत्। योजनद्वादशं गत्वा पुनरेव निवर्त्तते।। ह्रीं हुं फट् चिल्हाचक्रेश्वरि परात्परेश्वरी पादुकामासनं देहि मे देहि स्वाहा। अनेन मंत्रेण जपं पूजां च कुर्यात्॥१६॥

गुटिका साधन

साधना करने वाला व्यक्ति सर्वप्रथम चील पक्षी के घोंसले के पास जाकर उसे देवता स्वीकार कर प्रतिदिन पूजन करते हुए अत्यन्त श्रद्धा और भक्ति के साथ उसके खाने के लिए प्रसव के समय तक थोड़ा-थोड़ा मांस घोसले में डालता रहे। प्रसव के अन्त में फिर दो नाल बनाकर उसमें साढ़े तीन तोले के बराबर पारद रस अर्थात् पारा भरकर दोनों नालों के दोनों छेदों को सिक्थ से बन्दकर (मोम से बन्द कर) दोनों अण्डों के ऊपर दोनों नलों को रख दे तथा लोहे की शलाका अर्थात् तीली को नल के ऊपरी छेद में डालकर हल्के हाथ से अण्डे में इस प्रकार छेद करे कि अण्डा न फूटे और अण्डे में पारा भर जाय फिर उस अण्डे के छिद्रों को चील की विष्टा से बन्द कर दे। इसके पश्चात् उस वृक्ष के नीचे बलि अर्थात् मांस आदि उपहारों से अण्डों के फूटने तक नित्य चील की विधिपूर्वक पूजा करे तथा प्रतिदिन जाकर अण्डों का निरीक्षण करता रहे। जब अण्डे स्वयं फूट जाँय तो दोनों अण्डों के दोनों गुटकों को लेकर वृक्ष से उतर कर जो सर्वप्रथम मनुष्य मिले उसे एक देकर दूसरे को अपने मुख में रख ले। इस अनुष्ठान से (साधक)

बारह योजन दूर तक जाकर पुनः वापस लौट सकता है। 'ह्रीं हुं फट् चिल्हाचक्रेश्वरी परात्परेश्वरी पादुकामासनं देहि मे देहि स्वाहा' मन्त्र का जप और पूजन करना चाहिए। (इस मन्त्र को सर्वप्रथम एक लाख बार विधिपूर्वक जप कर सिद्ध कर लेने के बाद ही मनुष्य को अनुष्ठान करना चाहिए)।।९६।।

जलोपरि भ्रमण-मन्त्र

'ॐरमायै रामाय महेशाय महेशिन्यै इन्द्राय इन्द्राण्यै ब्रह्मणे ब्रह्माण्यै नमो नमः रुद्राय रुद्राण्यै तोयं स्तंभय वरुणं स्तंभय शोषय गच्छ गच्छ पादुकां मे देहि देहि स्वाहा।' इति मन्त्रः। लक्षजपेनास्य सिद्धिः ।

जल के ऊपर भ्रमण का मन्त्र

कृष्ण पक्ष की अष्टमी तिथि को नदी के किनारे श्मशान भूमि में षोडशोपचारों से विधि-विधान पूर्वक नारायण लक्ष्मी, शिवदुर्गा, इन्द्रशची, ब्रह्मा-ब्रह्माणी तथा रुद्र-रुद्राणी सभी देवताओं और देवियों का पूजन करके एक साल तक एक लाख बार मन्त्र को जपने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। साधक को जल के ऊपर चलने के लिएं सर्वप्रथम एक सौ आठ बार मन्त्र को जपना चाहिए।

स्योनाकबीजचूर्णं कृत्वाथारुह्य पादुकायुगलम् ।
मह्यामिव सलिलोपरि पर्यटति नरः सुविस्पष्टम् ।।९७।।

स्योनाक अर्थात् अरलू के पेड़ के बीजों का चूर्ण बनाकर, पादुकाओं पर पोतकर सुखा लेना चाहिए इसके बाद एक सौ आठ बार उपर्युक्त मन्त्र को जपकर दोनों पादुकाओं को पहन कर साधक मनुष्य पृथिवी पर चलनें के समान जल पर भ्रमण करता है। यह एकदम से स्पष्ट है अर्थात् सत्य है।।९७।।

नवनीतरुक्मगैरिकदुर्गंधामीनतैलकल्केन ।
सकलस्त्रोतोभंगाद् भ्रमति नरो नक्रवत्सलिले ॥९८॥

मक्खन, स्वर्ण, गेरू तथा प्याज बराबर मात्रा में लेकर कल्क (पेस्ट) बनाकर मछली के तेल के साथ मुख, कान, नाक आदि छिद्रों में पोतकर साधक मनुष्य जल पर नाके (अर्थात् नक्र=मगरमच्छ, घड़ियाल) की तरह भ्रमण करता है। (मछली के तेल और पेस्ट को एक सौ आठ बार उपर्युक्त मन्त्र से विधिपूर्वक अभिमंत्रित कर तथा शरीर के समस्त छिद्रों में तेलयुक्त लेप (पेस्ट) पोतकर ही साधक मनुष्य को जल में उतरना चाहिए)॥९८॥

अथ मृतसञ्जीवनीविद्या

शिव उवाच

'ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यः शर्वसर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः।' मंत्रः। भौमे श्मशाने अन्यैरदृष्टे लक्षजपेन सिद्धिः।

शिवजी ने कहा

'ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यः शर्वसर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः'—मन्त्र का मंगलवार को श्मशान में जाकर इस प्रकार जप करे कि दूसरा कोई व्यक्ति न देख सके। इस प्रकार एक लाख मन्त्र जपने से यह सिद्ध हो जाता है। सिद्ध होने के पश्चात् ही व्यक्ति को इस कर्म अथवा अनुष्ठान में प्रवृत्त होना चाहिए।

लिंगमंकोलवृक्षाधः स्थापयित्वा प्रपूजयेत्।
नवं घटं च तत्रैव पूजयेल्लिंगसन्निधौ।
वृक्षं लिंगं घटं चैव सूत्रेणैकेन वेष्टयेत् ॥९९॥

अंकोल (पिस्ते) के पेड़ के नीचे शिवलिङ्ग की स्थापना कर विधि-विधान

से पूजन करना चाहिए। लिङ्ग के समीप ही नये कलश की स्थापना कर उसकी भी विधिपूर्वक पूजा करके पुनः उस पेड़ को कलश और शिवलिङ्ग के साथ अर्थात् तीनों को एक साथ सूती धागे से लपेटकर बाँध देना चाहिए।।९९।।

चतुर्भिः साधकैर्नित्यं प्रणिपत्य क्रमेण तु।
एवं द्विद्विदिनं कुर्यादघोरेण समर्चयेत् ॥१००॥

पुनः चार साधक एक साथ प्रतिदिन क्रमशः प्रणाम करें। पुनः दो-दो दिन प्रत्येक साधक को शंकर जी का उपर्युक्त अघोर मंत्र से पूजन-अर्चन करना चाहिए।।१००।।

पुष्पादिफलपाकांतं साधनं कारयेद् बुधः।
फलानि पक्वान्यादाय पूर्वोक्तं पूरयेद्घटम् ॥१०१॥

उस पेड़ में फूल-फल आने तक साधक इस प्रयोग को करता रहे। जब फल पक जाँय तो बुद्धिमान् साधक वृक्ष के पके फलों से कलश को पूर्णतः भर दे।।१०१।।

तद्घटं पूजयेन्नित्यं गंधपुष्पाक्षतादिभिः।
तुषवर्जं ततः कुर्याब्बीजानां घर्षयेन्मुखम् ॥१०२॥

(साधक) उस घट की गंध, पुष्प तथा अक्षत् (चावल) से पूजा करे, पुनः सम्पूर्ण बीजों को भूसी से अलग करके दानों को मुख पर रगड़े।।१०२।।

तन्मुखे बृहणं वृत्तं किञ्चिकिञ्चित्प्रलेपयेत्।
विस्तीर्णमुखभागान्तः कुम्भकारकरोद्भवाम् ॥१०३॥

पुनः कुम्हार के द्वारा निर्मित बड़े मुखवाला मिट्टी का घड़ा लाकर उसमें बीजों को रखकर घड़े के मुख को सुहागे के चूर्ण से बन्द कर देना चाहिए।।१०३।।

मृत्तिकां लेपयेत्तत्र तानि बीजानि रोपयेत्।
कुंडल्याकारयोगेन यत्नादूर्ध्वमुखानि वै ॥१०४॥

घड़े के मुख पर मिट्टी लीप कर उन बीजों की कुण्डली के आकार के समान उसमें बुआई कर दे।

शुष्कं तं ताम्रपात्रोर्ध्वं भांडं देयमधोमुखम्।
आतपे धारयेत्तैलं ग्राहयेत्तं च रक्षयेत् ॥१०५॥

उसके सूख जाने पर उस पर ताबें का पात्र रखकर मुख नीचे की ओर कर देना चाहिए। पुनः गरम कर तेल निकाल कर (साधक को) अत्यन्त सावधानी से सुरक्षित रखना चाहिए।

माषार्द्धं चैव तत्तैलं माषार्द्धं तिलतैलकम्।
तस्य देयं मृतस्यैतत्सम्यक् तस्य सितेन तु ॥१०६॥
तत्क्षणाज्जीवयेत्सत्यं गतो वापि यमालयम् ॥
रोगादिसर्पादिमृता पुनर्ज्जीवन्ति निश्चितम् ॥१०७॥

आधे मासे के बराबर तिल के तेल में आधा मासा इस सुरक्षित तेल को मिलाकर मृत व्यक्ति के शरीर पर डाले तो उसी क्षण वह व्यक्ति पुनः जीवित हो जाता है भले ही वह क्यों न यमराज के घर चला गया हो। यह सत्य है। रोगादि तथा सर्पादि विषैले जन्तुओं के द्वारा काटा गया एवं मरा हुआ आदमी निश्चित रूप से इस अनुष्ठान के द्वारा पुनः जीवन धारण करता है अर्थात् जीवित हो जाता है॥१०६-१०७॥

अदृश्योपाय-मन्त्र

'ॐ हुंफट् कालि कालि मासं शोणितं खादय खादय देवि मा पश्यतु मानुषेति हुं फट् स्वाहा।' इति मन्त्रः। लक्षजपेन सिद्धिः॥

'ॐ हुं फट् कालि कालि मासं शोणितं खादय खादय देवि मा पश्यतु मानुषेति हुं फट् स्वाहा'—मन्त्र को सर्वप्रथम पूरे विधि-विधानपूर्वक एक लाख बार जप करने के पश्चात् ही साधक को कोई कार्य करना चाहिए।

अर्कशाल्मलिकार्पासपट्टपङ्कजतन्तुभिः ।
पंचभिर्वर्त्तिकाभिश्च नृकपालेषु पंचसु ॥१०८॥
नरतैलेन दीपाः स्युः कज्जलं नृकपालके ।
ग्राहयेत् पंचभिर्यत्नात्पूर्ववच्च शिवालये ॥१०९॥
पञ्चस्थानीयजातं तु एकीकुर्याच्च तं पुनः ।
मंत्रयित्वाऽञ्जयेन्नेत्रे देवैरपि न दृश्यते ॥११०॥

अर्क (मदार), सेमर, कपास, रेशम और कमल के धागे इन पाँचों की पाँच बत्ती बनाकर, मनुष्य की पाँच खोपड़ियों में रखकर, उसमें मनुष्य का तेल भरकर, दीप जलाकर शिवमंदिर में काजल बनाये पुनः पाँचों खोपड़ियों के काजल को एक साथ मिला ले और पुनः उस काजल को उपर्युक्त मन्त्र से (एक सौ आठ बार) अभिमंत्रित कर साधक यदि नेत्रों में लगा ले तो वह देवताओं को भी नहीं दिखाई देगा, पुनः दानव, मानव की क्या बात है?॥१०८-११०॥

गोरोचनेंगुदीतरुकुसुमं मार्जारस्याक्षि रोमाणि ।
द्विकभुक्तोच्छिष्टयुता गुटिकेयं कल्पलतिकाख्या ॥१११।

इति श्रीरावणशंकरसंवादे उड्डीशतन्त्रे मन्त्रसिद्धिनिरूपणादि-
विविधविषयकथोपकथने उत्तरार्द्धं परिसमाप्तम् ।

गोरोचन, इंगुदी के पेड़ का पुष्प, बिल्ली की आँखे और रोयें (बाल) को लेकर कौवे के उच्छिष्ट (जूठन) में मिलाकर कल्पलतिका नामक गुटिका बनाकर, उस गुटिका को उपर्युक्त मन्त्र से एक सौ आठ बार विधिपूर्वक अभिमंत्रित करके यदि साधक उस गुटिका को अपने मुख में रख ले तो उसे कोई भी आदमी नहीं देख पायेगा अर्थात् वह अदृश्य हो जायेगा॥१११॥

इति श्रीरावणशंकरसंवादे उड्डीशतन्त्रे मन्त्रसिद्धिनिरूपणादिविविध-
विषयकथोपकथने उत्तरार्धे डॉ. शशिशेखरचतुर्वेदिकृत
विभाहिन्दीव्याख्या परिसमाप्ता।

परिशिष्ट

अनुभूत सिद्ध मन्त्र

तन्त्रशास्त्र के रहस्य को समझना अत्यन्त कठिन है और मन्त्र-प्रयोगों को सिद्ध करना तो और भी दुष्कर है। नीचे तान्त्रिक-मनीषियों के द्वारा अनुभूत-सिद्ध प्रयोग किये जा रहे हैं, जिन्हें यथावत नियमपूर्वक करने से कोई भी व्यक्ति अपने उद्देश्य को निश्चित रूप से प्राप्त कर सकता है। सम्पूर्ण तन्त्रागम में जो भी प्रयोग बताये गये हैं वे सभी लोककल्याण की भावना से ही बताये हैं, अपने क्षुद्रस्वार्थ की पूर्ति के लिए तो कदापि नहीं। समस्त कर्मों में मारणकर्म का प्रयोग तभी करना चाहिए, जब अपने स्वयं के प्राण पर सङ्कट आ जाय। साधक को चाहिए कि वे किसी योग्य गुरु के निर्देशन में ही मन्त्रों का प्रयोग करें और वह भी अपने और लोगों के कल्याण, धन-सम्पत्ति की प्राप्ति एवं स्वास्थ्य-संवर्धनादि तथा आध्यात्मिक उन्नति के लिए। अनुचित तरीके से तान्त्रिक प्रयोगों को सिद्ध करने का प्रयत्न अपने ऊपर सङ्कट पैदा कर सकता है। अतः प्रयोग करने वाले लोगों से मेरा निवेदन है कि वे अत्यन्त सावधानी के साथ प्रयोग की सम्पूर्ण विधि योग्य गुरु से समझकर अपने और पीड़ित लोगों के कल्याण के लिए ही विभिन्न प्रयोगों को करें, सफलता अवश्य ही मिलेगी। साधक दुष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रयोगों को कदापि न करें।

तिलकमोहनी मन्त्र

मन्त्र—सरबांधो सरवान बाँधो, सोने मूठ कटारी बाँधो, चलै तो जाँघ बाँधो, देखै तो आँख बाँधो, मुँह दै पैठो जीभ चढ़ि बैठो, दोहाई यह सपथ गौरइया की, दोहाई माता परमेसरी की, दोहाई बाबा सिरबाल की।

विधि—उपर्युक्त मंन्त्र को पढ़कर मदिरा जमीन पर उड़ेल दे और फिर उसी मिट्टी को रगड़ कर तिलक करने से सब लोग मोहित हो जाते हैं।

मोहनी मन्त्र

मन्त्र—मैं मन मोहन सूरज, मोहन तेरा नाम

मैं मुँह धोउँ तेरा, वो आकर धोवे मेरा।

विधि—सूर्योदय से पूर्व तीन सौ बार मन्त्र का साधक जप करे। सूर्योदय के साथ साधक को दूध की धारा गिराते रहना और मन्त्र पढ़ते रहना चाहिए। इस प्रकार तीन अथवा सात दिन तक प्रयोग करने पर कार्यपूर्ण हो जायेगा अर्थात् साध्य व्यक्ति मोहित हो जायेगा।

मोहनी मन्त्र

मन्त्र—मोहनी मोहनी मैं पुकारुं, मोहनी मेरी माय, जाय मोहूँ (माया मोहनी) रहे ह्रदय लपटाय, गगन नयन जल वेध, गगन द्वारे ढ़ार सावर वही सराहिये काम सिद्ध हो जाय।

विधि—नौ रविवार को गुड़ चावल और गुड़ घी की नव आहुती देनी चाहिए। आहुति के समय साध्य व्यक्ति के नामोच्चारण के साथ साधक को आहुति देनी चाहिए और उसकी राख उसके घर की तरफ मुख करके फेंक देनी चाहिए। कार्यसिद्ध हो जायेगा अर्थात् व्यक्ति मोहित होकर रहेगा।

मोहनी मन्त्र

मन्त्र—हाथ पखारो मुँह धोवो, कच्ची मछरी खाँव, तुम तो मोहनी दरियाव की, चल माथे मेरे आव, राजा मोहों परजा मोहों, मोहों जग संसार, दोहाई तख्त सुलेमान पैगम्बर की।

विधि—आदित्यवार (रविवार), मंगलवार या बृहस्पतिवार को आँटा गूँथकर, मन्त्र पढ़ता हुआ गोली बना बनाकर मछली को साधक गोलियों को खिलाये। ऐसा करने पर कार्य अवश्य सिद्ध हो जायेगा।

वशीकरण मन्त्र

मन्त्र—'अलीउल जुलफीकार'

विधि—उपर्युक्त मन्त्र को स्याही से कागज पर लिखकर सात-सात ताबीज बनाकर तीन दिन तक साध्य व्यक्ति का नाम लेकर आग में जलाने पर वह व्यक्ति वश में हो जायेगा।

वशीकरण मन्त्र

प्रथम मन्त्र—'ॐरक्तचामुण्डे अमुकस्य वश्यं कुरु कुरु स्वाहा'

द्वितीय मन्त्र—'ॐक्लीं रक्तचामुण्डे अमुकस्य वश्यं कुरु कुरु स्वाहा'

विधि—साधक व्यक्ति पहले स्नान कर तथा पवित्र होकर धूप जला एक हजार बार मन्त्र को जप कर सिद्ध कर ले। फिर सात दिन तक सात बार मन्त्र पढ़-पढ़ कर साधक सात चिल्लू पानी पीता जाय। साधक प्रतिदिन जिसका नाम लेकर मन्त्र पढ़ेगा वह मनुष्य चला आयेगा अर्थात् वश में हो जायेगा और जब छोड़ना चाहे तो यही मन्त्र, स्नान कर पवित्र होकर सात दिन तक पढ़ कर सात चिल्लू पानी फेंक देना चाहिए। ऐसा करने पर वह व्यक्ति मन्त्र के प्रभाव से मुक्त हो जायेगा।

वशीकरण मन्त्र

साधक रविवार को अपना नाखून काटकर, घी में खूब जलाये। तब जिसको वश में करना चाहो उसकी बायें तरफ कपड़े पर उस जले हुए नाखून को छिड़क दे। इस प्रकार तीन रविवार तक यह प्रयोग करने पर वह आदमी अवश्य ही वश में हो जायेगा। वशीभूत न होने पर साधक को यह प्रयोग सात रविवार तक और करना चाहिए।

वशीकरण मन्त्र

जब सूर्य या चन्द्रग्रहण लगे तब ग्रहण के शुरू में एक चित्ती कौड़ी निगल जाय। जब ग्रहण मोक्ष होने लगे तब दूसरी चित्ती कौड़ी पर कोई निशान बनाकर निगल जाय। दूसरे या तीसरे दिन जब पाखाने के साथ वो कौड़ियाँ निकलेंगी, उन्हें प्राप्त कर ले और साफ करके रख ले। जिसको वश में करना हो उसके

बदन पर पहली कौड़ी घिसकर लगा दे और जब मुक्त करना हो तो दूसरी कौड़ी जिस पर निशान है उसे घिसकर उसके बदन पर लगा देने पर वह मनुष्य वशीकरण के प्रभाव से मुक्त हो जायेगा।

वशीकरण कील

मन्त्र—'ऊं हं तां तीं हां तुं तुं तं तं इं तां तं उं तं तं हां।'

विधि—साधक यह मन्त्र 'स्फटिक की माला से' मंगलवार को जपे। उदुम्बर की लकड़ी का आठ अंगुल का मेख (कीला या घूँटी) ले आये और जहाँ मन्त्र जपे वहाँ उस मेख (कील) को उसका (साध्य मनुष्य का) नाम लेकर ठोक दे और एकदम शान्त रात्रि में उसका नाम लेकर आठ हजार बार मन्त्र जपे। जिसका भी नाम लेकर साधक व्यक्ति मन्त्र का जप करेगा, वह वशीभूत होकर निश्चित ही आ जायेगा।

वशीकरण मन्त्र

मन्त्र—'चिटी चिटी महाचाण्डालिनि अमुकं मे वशमानय स्वाहा।'

इस मन्त्र का पूर्ण विधिपूर्वक एक सप्ताह तक जप करने से राजा भी वश में हो जाता है।

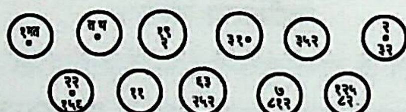
विधि—ताड़ के पत्ते पर उस व्यक्ति के नामसहित मन्त्र को महावर (लाल रंग) से लिखकर दूध मिले जल में डाल दे और रात को अग्नि से सिद्ध करने पर शीघ्र ही वह मनुष्य वशीभूत हो जाता है।

वशीकरण यन्त्र

जिसको वश में करना हो उसका नाम नीचे लिखे यन्त्र को गेहूँ की रोटी पर स्याही से लिख कर कुत्ते को खिलाना चाहिए।

नोट—अमुकस्य के स्थान पर साध्य व्यक्ति के नाम का उच्चारण मन्त्रोच्चारण केसाथ साधक मनुष्य को करना चाहिए।

सात दिन तक ग्यारह रोटी प्रतिदिन कुत्ते को खिलाने पर वह आपसे मिलने के लिए अत्यन्त उतावला तथा भूख-प्यास की चिन्ता किये बिना आपके शरणागत होकर रहेगा।



वशीकरण यन्त्र

विधि—अपामार्ग (चिचिड़ा) की लेखनी और नारियल की स्याही से प्रतिदिन साठ यन्त्र पैतालिस दिन तक साध्य व्यक्ति के नाम एवं स्वरूप का ध्यान करते हुए लिखे। साधक द्वारा इस प्रकार प्रयोग किये जाने पर वह व्यक्ति शीघ्र ही वशीभूत होकर सामने प्रकट हो जायेगा।

२	७	६
९	५	१
४	३	८

स्त्री वशीकरण मन्त्र

मन्त्र—'ॐ ह्रीं रक्तचामुण्डे कुरु कुरु अमुकीं मे वसमानय आनय स्वाहा।'

विधि—पहले पञ्चोपचार से देवता का विधिवत पूजन करना चाहिए। फिर पच्चीस हजार उपर्युक्त मन्त्र का जप करने से मन्त्र सिद्ध हो जायेगा। फिर प्रतिदिन एक माला जप करे। जब जरूरत हो तब रेंड़ की लकड़ी का चार-चार अंगुल का १०८ टुकड़ा बनाकर तथा सेन्धा नमक और सरसों का तेल मिलाकर सात दिन तक १०८ बार हवन करने पर कैसी भी अंहकारी स्त्री होगी? वह निश्चित ही वश में आ जायेगी।

स्त्री वशीकरण धूल

मन्त्र—मन्त्र मोहन थंभन वसीकरन, ऐ तीनौ एकै जावगौरा मोहो शिवशंकर, सीता मोहो श्रीराम, मैं मोहों फलाने को, मेरा मोहल तजे परान, सब सो दोहाई कामरूकमछा की, दोहाई ईश्वर महादेव की।

विधि—उसके बाँयें पैर के एडी की धूल लेकर सात बार उपर्युक्त मन्त्र पढ़कर उसके सिर पर डाल देने पर वह स्त्री स्वयं वशीभूत होकर आ जायेगी।

वशीकरण यन्त्र

मन्त्र—'ॐक्लीं उच्छिष्ठ चाण्डालिनि मातंगी अमुकं मे वस्यं कुरु कुरु ह्रीं स्वाहा।'

विधि—उपर्युक्त मन्त्र का जप जूठे-मुख साधक को करना चाहिए। जप करने के पहले जलेबी या कुछ मीठा खा लेना चाहिए। रात्रि को एकान्त में दीपक जलाकर, गुग्गुल का धूप देकर, बाइस दिन तक बाइस माला मन्त्र जप करे और सुबह एक सौ ग्यारह पान मन्त्र पढ़कर नदी में बहा देने से साध्य व्यक्ति का निश्चित ही वशीकरण हो जायेगा और वह वही करेगा तथा समझेगा जो साधक उससे कहेगा। यह अनुभूत प्रयोग है इसमें किसी भी प्रकार का सन्देह नहीं करना चाहिए।

वशीकरणे मन्त्र

जिससे जान पहचान न हो और उसको वश में करना चाहे तो उसका नाम यन्त्र पर लिखे और आठ यन्त्र लिखकर आठो पर उसका नाम लिखे, इस प्रकार लिखने से वह आदमी या स्त्री वशीभूत होकर अपने आप चली आयेगी।

८	१२
०	८

वशीकरण काजल

मन्त्र—'कजरा कज्जा कजर सलाई, कज्जल दे कालिका माई, ज्यों ज्यों कजरा नयनन चढ़िहैं, त्यों-त्यों अमुके के पाँव पर अमुकी परिये।'

विधि—शनिवार को खोपड़ी को पीला चावल देकर निमंत्रण देना चाहिए तब सरसों के तेल को नये दीपक में पूरा भर दे। आठ फूल गुड़हल, आठ कुरा चावल का आठ बतासा, चमेली का तेल और सिंदूर लगाकर खोपड़ी का पूजन करे तब खोपड़ी में काजल बनाये, एक माला जपते-जपते खोपड़ी चल देगी फिर आ जायेगी, जप करता रहे, फिर उसी तरह खोपड़ी उड़ेगी और उस पर चमड़ा और बाल आ जायेंगे, फिर तीसरे माला में उड़ेगी-तब खोपड़ी ताजी कटी हुई मालूम होगी और हँसेगी तथा कुछ बातचीत करेगी। बहुत सा भ्रम पैदा करेगी। चौथे माला में फिर उड़ेगी। जब माला पूरी हो जायेगी तब खोपड़ी ही खोपड़ी रह जायेगी। तब काजल निकाल कर डिबिया में रख ले। अब जिस भी व्यक्ति को वश में करना हो? तो साधक उसका नाम और अपना नाम बोलकर, उस सिद्ध काजल को आँखों में लगाकर उस आदमी अथवा स्त्री के सामने जाने पर साधक को देखते ही वे पुरुष या स्त्री वशीभूत हो जायेंगे।

आकर्षण मन्त्र

मन्त्र—'ॐचामुण्डे ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल स्वाहा।'

विधि—पहले दश हजार बार उक्त मन्त्र का जप करके सिद्ध कर ले, फिर स्त्री को देखकर मन्त्र का जप करने पर तत्काल स्त्री पीछे चलने लगती है अर्थात् आकृष्ट हो जाती है।

आकर्षण मन्त्र

मन्त्र—'ॐनमो कैलाश पर्वत गौरा देवी माई, जे मन में चाहूँ ते आवै धाई, मेरी भक्ति गुरु की शक्ति, फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।' इस मन्त्र का साधक को केवल जप करना चाहिए। जिसका ध्यान करके जप किया जायेगा वह निश्चित ही आ जायेगा अर्थात् वह आदमी या स्त्री आकृष्ट होकर साधक की अनुचर हो जायेगी।

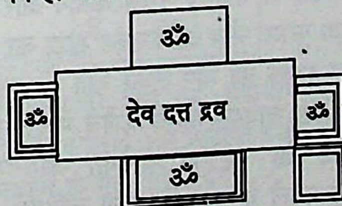
आकर्षण यन्त्र

'अमुकं आकर्षय, आकर्षय' मन्त्र का उच्चारण करते हुए साधक ४५ दिन तक अपामार्ग (चिचिड़ा) की लेखनी से भूमि पर प्रतिदिन साठ यन्त्र लिखे और मिटाये। ऐसा करने पर साध्य व्यक्ति का अवश्य ही आकर्षण होगा और वह आ जायेगा। यह प्रयोग गायब हो चुके लोगों को बुलाने के लिए करना चाहिए।

४	९	२
३	५	७
८	१	६

स्तम्भन-यन्त्र

इन दोनों ताबीजों को कागज पर गोरोचन से जब रविवार के दिन पुष्य नक्षत्र हो तब लिखना चाहिए। जिसके यहाँ जाय उसका नाम ताबीज पर लिख कर आगे बाँधे, धातु रुकी रहेगी, पीछे करने पर तब समाप्त होगी। यह प्रयोग करने पर व्यक्ति का स्तम्भन हो जायेगा और वह एक स्थान पर स्थिर हो जायेगा।



स्तम्भन-यन्त्र

१. इस यन्त्र को अष्टगंध से भोजपत्र पर लिखकर पुरुष यदि अपने गले में बाँध ले तो साध्य व्यक्ति का स्तम्भन हो जायेगा।

२. यदि स्त्री के योनि से खून (रक्त) निकल रहा हो तो तलवार खड़ी करके

उसकी नोक पर रखकर के लिखे और उसे सिर में बाँधने से रक्त का निकलना बन्द हो जायेगा।

३. अगर दुकान बन्द करना चाहें तो टिकरी (मीठी पूड़ी) पर लिखकर दुकान के नीचे गाड़ दे। दुकान बन्द हो जायेगी।

नोट—यह यन्त्र उपर्युक्त तीनों कार्यों के लिये है।

९	२६	२	७
६	३	१३	१२
१५	१०	८	१
४	५	११	१४

मारण-यन्त्र

मन्त्र—'लाइ जालु या कहार या इजराईल कैद खलासी'।

'विसमिल्ला रहमाने रहीम हर वलाय दफे गरददइवो खाइ फतादवार लापईता इलाउलीला सैफ इल जुल्फिकार।।' यह उपर्युक्त मन्त्र दो सौ बार जपने पर सिद्ध होगा। तब हलालखोर (मेहनत से धन कमाने वाला) के यहाँ से झाड़ू का बाँस चोरी से मँगाकर उससे कमान और दो तीर भी उसी से बनाये और तब एक पुतला मोम का बनाकर खड़ा कर दे और यह मन्त्र सौ बार पढ़कर, साध्य व्यक्ति का नाम लेकर यही तीर कमान पर चढ़ाकर के पुतले को मारे। वह मर जायेगा। पहला कलेजे में लगेगा और दूसरा धड़ में लगेगा तब उसकी देह नष्ट हो जायेगी। जैसा मन में आये वैसा सावधानीपूर्वक तीर पुतले के अंग में मारना चाहिए।

मारण-यन्त्र

मन्त्र—'रक्त का तेल बार के वाती, काटि करेजा भूजैं छाती, आँके आवै वाँके जाव, फलाने के करेजा धै-धै खाव। कलुवा बीर मसान की दुहाई।'

विधि—मुर्दे के बाल को रूई में लपेट कर फूलबत्ती बनाये और तब कड़ुवा (राई के तेल) तेल में डुबोकर, दीपक में खंसी (बकरा) का खून भर दे, मछली, मांस और शराब का भोग लगाकर एक हजार मन्त्र दश दिनों तक जपना चाहिए और जब तारा टूटकर पृथिवी पर गिरे, तब यही मन्त्र जपकर के साध्य व्यक्ति का नाम उच्चारण कर सात सूई एक नीबू में गोद देने पर व्यक्ति अवश्य मर जायेगा।

मारण-आहुति

मन्त्र—'ॐचामुण्डे अमुकं हन हन स्वाहा।'

विधि—एक हजार मिर्चा मीठे तेल (औषधि एवं सुगन्ध मिश्रित) में डुबोकर के बबूल की लकड़ी सुलगाकर, दक्षिण मुख बैठकर उक्त मन्त्र जपे और मिर्चा अग्नि में डालता जाय। ऐसा करने पर साध्य व्यक्ति की मृत्यु अवश्य होगी।

मारण यन्त्र

८	३	४
१	५	९
६	७	२

अमुकं हन हन कहकर ४५ दिन तक, अपामार्ग (चिचिड़ा) की कलम से साठ यन्त्र प्रतिदिनं भूमि पर लिखे और मिटाये। इस प्रकार से प्रयोग करने पर साध्य व्यक्ति की अवश्य ही मृत्यु हो जायेगी।

मारण-यन्त्र

मन्त्र—'ॐऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे।'

यह महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती का बीज मन्त्र है। इस उपर्युक्त मन्त्र का दस हजार बार जप करने पर मन्त्र सिद्ध हो जायेगा

विधि—श्मसान का कोयला (अग्नि) पर या मदार की लड़की पर नीम की पत्ती से जितना मन्त्र जप करना हो उसके दशांश का हवन करना चाहिए। अगर १०० बार मन्त्र जप किया गया हो तो उसका १० बार उसी मन्त्र का उच्चारण कर साधक को हवन करना होगा।

नोट—नीम की पत्ती या मिर्चा खाकर करना चाहिए।

क—अगर उच्चाटन करना हो तो श्मसान की राखी, पीली सरसो कडुवा (राई के) तेल से दशांश हवन करना होगा।

ख—अगर वशीकरण करना हो तो घी, कपूर, चन्दन और किसी मीठाई से मन्त्र के दशांश का हवन करना होगा।

नोट—वशीकरण के लिए मीठा खाकर, जिससे मुख मीठा हो जाने पर हवन करना चाहिए।

नोट—यह उपर्युक्त मन्त्र प्रयोग के लिए पहले उत्कील मन्त्र का जप २१ बार, गुग्गुल, दशांग और देसी घी से हवन करके तथा कील छुड़ाने के बाद आगे मन्त्र का जप करना चाहिए।

उत्कील मन्त्र—'ॐ श्रीं क्लीं ह्रं शप्तशति कुरु कुरु स्वाहा।'

उग्र मारण प्रयोग

'ॐनमो आदेश गुरु कूं वांस की धनुष लोहरू का तीर, मांरू मांरू हनुमत वीर, जब लग हनुमत लंका जाई, जब लग भैरो नरसिंह अमुक को खाइ। जब लग हनुमत मुख धोवे, तब लग भैरो नरसिंह अमुक को चूस चास न्यारा घरे, मेरी भक्ति गुरु की शक्ति फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।

विधि—सवा पाव काली उर्द को उल्टी चक्की में पीसवा कर साध्य व्यक्ति का पुतला बनाये, तब शत्रु का नाम भोजपत्र पर लिखकर शत्रु (पुतले) की छाती पर चिपका दें, तब बाँस का धनुष बनाकर साही के काँटे का तीर लगाकर सात बार मन्त्र पढ़कर, पुतले की छाती में मारना चाहिए। पुतला को पहले जूठे पानी

में नहला दें तब प्रयोग करें। यदि प्राण प्रतिष्ठा करके प्रयोग करें तो और भी अच्छा है। शत्रु के सामने न जायँ, अच्छा करना हो तब तीर निकाल कर उर्द के आटे से घाव को भर दे (बन्द कर दें) और उसके सामने जाकर आश्वासन दे कि आराम हो जावेगा। भैंसिया गुगुल की धूनी देता रहे। (जब तक प्रयोग करे तब तक) और सिद्धि के लिए अयुत (दश हजार) जप करे तब भी गुग्गुल की धूनी लगातार देता रहे और लाल कनैल का फूल चढ़ावे, कड़ुवा (राई के) तेल का दीपक जलाये, कड़ू तेल में पुआ गुलगुला बनाकर पीतल की थाली में रख कर भोग लगाये। गुग्गुल का धूप देना चाहिए। यह एक अनुभूत उग्र मारण अनुष्ठान है। यह प्रयोग उक्त विधि से करने पर शत्रु की अवश्य ही मृत्यु हो जायेगी।

विद्वेषण

१. भैंस व घोड़े के विष्ठा सहित गोमूत्र मिलाकर उस मिश्रित द्रव्य द्वारा जिन दो व्यक्तियों का नाम लिखा जायेगा उन दोनों में शत्रुता का भाव पैदा हो जायेगा।

२. षटकोण यन्त्र बनाकर, उस यन्त्र में जिन दो शत्रुओं का नाम लिखे उसके ऊपर 'ॐ भैरवाय श्मशानवासिने अमुकामुयोर्विद्वेषं कुरु कुरु हुँ फट्' इस महाभैरव मंत्र को लिखने से उन दोनों शत्रुओं में परस्पर झगड़ा पैदा हो जायेगा।

विद्वेषण-यन्त्र

रविवार को निम्नलिखित यन्त्र को स्याही से कागज पर लिखकर शत्रु के दरवाजे पर गाड़ देना चाहिए। ज़ब तक यन्त्र नहीं निकालेगा हमेशा झगड़ा होता रहेगा।

३१	३१	३१	३१	३१	३१	३१
३१	३१	३१	३१	३१	३१	३१
३१	३१	३१	३१	३१	३१	३१
३१	३१	३१	३१	३१	३१	३१

बुद्धिनाश करने वाला मन्त्र

मन्त्र—'ॐ ह्लीं बगलामुखी नाम—दुष्टानां वाचं मुखं स्तम्भय जिह्वां कीलय कीलय बुद्धिनाशय ह्लीं ऊँ स्वाहा।

नोट—यह बगलामुखी मंत्र है। इसका फल दुश्मन को नाश करने वाला है। श्मशान में जाकर पीली सरसों हाथ में लेकर एक सौ बार मंत्र पढ़ता हुआ, (श्मसान में जाकर) मुर्दे की चिता की अग्नि में हवन करना चाहिए। अगर ग्रहण लगा हो तो उसी प्रकार मुर्दे की चिता की अग्नि में नव बार पीली सरसो से मंत्र पढ़ता हुआ हवन करना चाहिए। इस प्रकार यह प्रयोग उपर्युक्त प्रकार से करने पर शत्रु की बुद्धि नष्ट हो जायेगी।

उच्चाटन-मंत्र

मन्त्र—या मजिल कुल जव्वार अनीश्व कहर फलाना अजीज सुलताना।

विधि—घर में अथवा बाहर पहले दिन पाँच हजार, दूसरे दिन पाँच हजार और तीसरे दिन पाँच हजार बार उपर्युक्त मन्त्र पढ़ने पर शत्रु का निश्चित उच्चाटन हो जायेगा।

भूत बुलाने का मंत्र

मंत्र—'ॐ हनुमान वीर व्रजधारी, इंकिनी संकिनी धेरी मारी; गंगा जमुना हमारो ठाँव, बोले वकारै तव गुरु गोरखनाथ के कान।

विधि—चालिस दिन धूप, दीप देकर और एक लड्डू चढ़ा कर उक्त मन्त्र जपना चाहिए और लड्डू लड़कों को बाँट देना चाहिए। ऐसा करने पर भूत साधक के सामने आ जायेगा।

भूत बुलाने की विधि

विधि—एक माला के बीच में चौवन मनके बाद फाहा (रुई की बत्ती) लगा देना चाहिए। धूप दीप देकर उपर्युक्त मन्त्र को एक माला जपे तब एक सांस से सात बार या चौदह बार या एक्कीस बार मन्त्र जप कर रूई की बत्ती फूँक कर सुघाँ दे, भूत अपना एकदम स्पष्ट समाचार कह देगा।

देवता, प्रेत या जिन्न को बुलाने का मन्त्र

मन्त्र—'कामरूपीठकामख्यादेवीसहिते सर्वजनवशीकरणं आनय स्वाहा।'

विधि—१० दिन तक एक हजार बार धूप, दीप, नैवेद्य लगाकर जप करे और चालिस बार उक्त मन्त्र का जप करके सर्वप्रथम सिद्ध कर लेना चाहिए।

दूसरे की विद्यावाद्यन ताली बताये और सभी भय दूर हों

१. मन्त्र—'तरे धरती ऊपर आकाश, पिण्ड प्राण गुरु के पास, रात राखे चन्द्रमा, दिन राखै सूरज, धरती माता तुम राखौ काल संकट दूर, जहाँ लग जाय मेरी ताली, तहाँ लगे व्रज के वारी, दोहाई महादेव की।'

२. सोने के समय का मन्त्र—'हम सूती उत्तर दिशा, नाम लिये सुग्रीव, का, वार न वाँकै हमार, पहरा अर्जून भीम का।' उपर्युक्त मन्त्र पढ़ने पर व्यक्ति के समस्त भय दूर हो जायेंगे।

परिहा का यन्त्र

भागा हुआ व्यक्ति तुरंत वापस आ जायेगा

फे	तो	अलिफ	२४
हे	अलिफ	लाम	६८
हे	अलिफ	वाव	२४

विधि—जो कोई व्यक्ति भाग गया हो, तो यही ताबीज कागज पर लिखकर चरखे में चालिस बार घुमाये और बाद में बेर के पेड़ में बाँध देने पर वह तुरंत स्वयं ही वापस चला आयेगा।

शत्रु के मुख को बन्द करने का यन्त्र

यह यन्त्र भोजपत्र पर अंष्टगंध से लिखकर अपने पास रख लेने पर शत्रु का मुख बन्द रहेगा और वह कुछ भी बोल नहीं पायेगा।

१११	३	६	१०४
५	१०५	११०	४
१०६	८	१	११९
२	१०८	१०७	७

परिहा का यन्त्र (भागा हुआ शीघ्र ही वापस आ जायेगा)

इस यन्त्र में उसका नाम लिखकर और इस यन्त्र को कागज पर स्याही से लिखकर पत्थर के नीचे गाड़ देने पर वह अपने आप ही वापस आ जायेगा।

२१	६८	१८
३/६	२४	१२
३०		२४

सिद्ध अघोर-मन्त्र

मन्त्र—'ॐ अघोर, घार महाघोर, जिमीघोर, आसमानघोर, साता का सत्त घोर, अर्जुन का बान घोर, भीम की गदा घोर, वासुकी नाग घोर, घोर ई में खाना घोरई में पीना, घोरई में रहना, छप्पन छुरी आगे चले, बावन छुरी पीछे चले, ताके बीच अघोरी चले, अपनी माता का पिये दूध हराम करे, जो मैं कहूँ सो न करे तो अपने गुरु के रक्त में स्नान करे।'

विधि—खीर बनाकर उसमें मछली, शराब और मांस छोड़ देना चाहिए और उसी का भोग रखना चाहिए। दही, गुड़, लाल फूल, माला, अबीर का गोल चौका, खड़ी बत्ती वाले घी का दीपक और लाल माला उसी दीपक को पहना कर फिर उसी खीर से एक सौ आठ बार हवन करना चाहिए और चालिस दिन तक एक माला मन्त्र जपना चाहिए—इसी तरह चालिस दिन बराबर खाना और हवन करना चाहिए, सभी देवदूत उपस्थित होंगे तब साधक जो चाहे उनसे करवा सकता है।

अघोर काली मंत्र

नोट—मारण, उच्चाटन और मोहन, जो इच्छा हो इसी मन्त्र से करना चाहिए।

मन्त्र—'ॐगाँव के पश्चिम पीपर के गाछ, ताही चढ़ काली पारे हाँक, नगन मैं पूजै चक्र, महा मांस भखै, आपन जिआवै पराया खाय, एनैकर दीठ, ओने कर पीठ, बायें चारो काली, सत्य छोड़ असत्य भाखै, असीयाकोट नर्क में परइ, सत्य प्रत्यक्ष।'

विधि—चौकोर मुख वाला दीपक, आटे की रोटी, सिन्दूर, काजल, चोटी, बिन्दी, डिबिया, ग्यारह लाल चूड़ी, मदिरा, मांस, मछली, कंघी, दर्पण, पंचमेवा, (उरद का) बड़ा, दही, पूड़ी, गुड़, गुलगुला, लाल फूल की माला, लाल छुछुची, गुग्गुल, कपूर, धूपबत्ती, अबीर का गोला चौका; यही प्रयोग २१ दिन तक करने पर, आकाशवाणी होगी कि तुम्हारा काम हो गया है और यदि प्रत्यक्ष करने की इच्छा हो तो और आगे भी करते रहना चाहिए। उपयुर्क्त मन्त्र से जिस किसी भी व्यक्ति के नामोच्चारण और स्वरूप का ध्यान करते हुए यह प्रयोग किया जायेगा उस व्यक्ति का अवश्य ही मारण, उच्चाटन अथवा आकर्षण होकर रहेगा।



तन्त्रशास्त्र-ग्रन्थाः

अन्नदाकल्पतन्त्र। हिन्दी टीका सहित। श्री एस. एन. खण्डेलवाल
अभिनवगुप्त-एक परिचय। डॉ. (श्रीमती) प्रेमा अवस्थी
अहिर्बुध्न्यसंहिता (श्रीपाञ्चरात्रागमान्तर्गत) 'सरला' हिन्दीटीकासहित। डॉ. सुधाकर मालवीय
आगमतत्त्वविलास। हिन्दी-टीका सहित। श्री एस. एन. खण्डेलवाल। (1-4 भाग सम्पूर्ण)
ईश्वरप्रत्यभिज्ञाविमर्शिनी। (ज्ञानाधिकार)। प्रथम अधिकार के पाँचवे आह्निक की सप्तम कारिका से लेकर आह्निक के अन्त तक की 'लीला' हिन्दी व्याख्या। टीकाकार - डॉ. दयाशङ्कर शास्त्री
एकजटातारासाधनतन्त्र। हिन्दी टीका सहित। श्री एस. एन. खण्डेलवाल
Kamakala Vilasa : Text with 'Cidwalli' Sanskrit Commentary and English Translation, Notes etc. Dr. R. P. Dwivedi & Dr. S. Malaviya
कामकलाकालीसपर्या। डॉ. रामप्रिय पाण्डेय
कामकलाविलास। चिद्वल्ली संवलितः। सरोजिनी हिन्दी व्याख्या। डॉ. श्यामकान्त द्विवेदी 'आनन्द'
कामाख्यातन्त्र। 'ज्ञानवती' हिन्दी टीका सहित। आचार्य राधेश्याम चतुर्वेदी
कुण्डलिनी शक्ति। (योग-तान्त्रिक साधना-प्रसङ्ग) श्री अरुणकुमार शर्मा
कुलार्णवतन्त्र। 'नीरक्षीरविवेक' हिन्दीटीका। डॉ. परमहंस मिश्र
गायत्री-मन्त्रार्थ भास्कर। भाषा टीका सहित। पं. यमुना प्रसाद द्विवेदी
गायत्रीमहातन्त्र। आचार्य राधेश्याम चतुर्वेदिप्रणीत। हिन्दीभाष्य विभूषित
तन्त्रविज्ञान और साधना। श्री सीताराम चतुर्वेदी
तन्त्रसार। अभिनवगुप्तपादाचार्य विरचित। हिन्दीटीका सहित। (1-2 भाग)। डॉ. परमहंस मिश्र
तन्त्रराजतन्त्र। हिन्दी टीका सहित। श्रीकपिलदेव नारायण
तन्त्रसारसङ्ग्रह। नारायण विरचित। सव्याख्या। आंग्ल एवं संस्कृत भूमिका सहित।
तन्त्रालोक। अभिनवगुप्तपादाचार्य। जयरथकृत 'विवेक' टीका एवं पं. राधेश्याम चतुर्वेदीकृत हिन्दीटीका
त्रिपुरारहस्य। डॉ. जगदीशचन्द्र मिश्रकृतहिन्दी अनुवाद सहित। (ज्ञान एवं माहात्म्यखण्ड)
त्रिपुरार्णवतन्त्र। (उपासनाखण्ड) हिन्दीटीका सहित। डॉ. जगदीशचन्द्र मिश्र
त्रिपुरासारसमुच्चय। श्रीमधुसूदनप्रसादशुक्लः
दक्षिणकालिकासपर्यापद्धति। डॉ. रामप्रिय पाण्डेय
दुर्गासप्तशती। दुर्गाप्रदीप-गुप्तवती-चतुर्धरी-शान्तनवी-नागोजीभट्टी-जगच्चन्द्रिका-दंशोद्धार नामक सप्तटीकायुक्त।
दुर्गासप्तशती। मूलमात्र। नव-शत-सहस्रचण्डी-पल्लवयोजना-कवचअर्गला-कीलक-कुञ्जिकास्तोत्र सहित।
देवीरहस्य। (परिशिष्ट सहित) श्रीरुद्रयामलतन्त्रार्गत। हिन्दीटीका सहित। श्री कपिलदेव नारायण
नीलसरस्वतीतन्त्र। श्री एस. एन. खण्डेवालकृत हिन्दी टीका।
नित्याषोडशिकार्णव। संस्कृत एवं हिन्दी-टीका सहित। श्री एस. एन. खण्डेलवाल
नित्योत्सव। हिन्दी-टीका सहित। श्रीपरमहंस मिश्र
नेत्रतन्त्र। क्षेमराजकृत 'नेत्रोद्योत' संस्कृत एवं श्रीराधेश्याम चतुर्वेदीकृत 'ज्ञानवती' हिन्दीटीका सहित
परलोकविज्ञान। श्री अरुणकुमार शर्मा
प्रत्यभिज्ञाहृदय। हिन्दी टीका सहित। डॉ. सुधांशु कुमार षडंगी

प्राणतोषिणी। मूलमात्र। श्रीरामतोषण भट्टाचार्य।
पुरश्चर्यार्णव। श्रीनेपालमहाराजाधिराज प्रतापसिंह साहदेवविरचित। सम्पादक - म. म. मुरलीधर झा
प्रपञ्चसारसारसंग्रह। (मूलमात्र) गीर्वाणेन्द्रसरस्वतीविरचित। के. एस. सुब्रह्मण्यशास्त्री सम्पादित।
ब्रह्मास्त्रविद्या एवं बगलामुखी साधना। डॉ. श्यामाकान्त द्विवेदी
भूतडामरतन्त्र। श्री एस. एन. खण्डेलवालकृत हिन्दी टीका
भारतीय शक्ति-साधना। (शक्ति-विज्ञान : स्वरूप एवं सिद्धान्त) डॉ. श्यामाकान्त द्विवेदी 'आनन्द'
Mahanirvanatantram. Sanskrit Text and English Translation by M. N. Dutta
मन्त्र और मातृकाओं का रहस्य। डॉ. शिवशङ्कर अवस्थी
महाकालसंहिता (कामकला कालीखण्ड)। 'ज्ञानवती' हिन्दीभाष्य सहित। प्रो. राधेश्याम चतुर्वेदी
महाकालसंहिता (गुह्यकालीखण्ड)। 'ज्ञानवती' हिन्दीभाष्यसहित। प्रो. राधेश्याम चतुर्वेदी (1-5 भाग)
मन्त्रमहोदधि। 'नौका' संस्कृत टीका तथा 'अरित्र' हिन्दी व्याख्या। डॉ. सुधाकर मालवीय
महानिर्वाणतन्त्र। हिन्दी टीका सहित। श्रीकपिल देव नारायण
मुद्राविज्ञान-साधना। डॉ. श्यामाकान्त द्विवेदी
राधातन्त्र। हिन्दी टीका सहित। श्री एस. एन. खण्डेलवाल
रुद्रयामलतन्त्र। हिन्दी टीका सहित। टीकाकार - डॉ. सुधाकर मालवीय
रेणुकातन्त्र। हिन्दी टीका सहित। श्रीकपिल देव नारायण
ललितासहस्रनाम। 'सौभाग्यभास्करभाष्य' एवं श्रीभारतभूषणकृत विस्तृत हिन्दी व्याख्या।
ललितोपाख्यान। (तन्त्र)। मूलमात्र
वर्णबीजप्रकाश। श्रीसरयूप्रसाद द्विवेदी। सम्पादक - डॉ. परमहंसमिश्र
वरिवस्यारहस्य। 'प्रकाश' संस्कृत एव डॉ. श्यामाकान्त द्विवेदी 'आनन्द' कृत हिन्दी टीका सहित।
विज्ञानभैरव। श्रीबापूलाल आँजना विरचित कारिकानुवाद विवृतभागस्थ हिन्दी व्याख्या
बृहत्तन्त्रसार। कृष्णानन्द आगमवागीशकृत। 'साधनात्मक' हिन्दीटीका सहित। श्रीकपिलदेव नारायण
श्रीतत्त्वचिन्तामणि। संस्कृतटीका एवं 'भावना' हिन्दी टीका। श्रीमधुसूदनप्रसादशुक्ल (1-2 भाग)
श्रीविद्यार्णवतन्त्र। 'साधनात्मक' हिन्दीटीका सहित। श्रीकपिलदेव नारायण (1-5 भाग सम्पूर्ण)
श्रीविद्यासपर्यापद्धति। ब्रह्मश्रीशङ्कररामशास्त्री
श्रीविद्या-साधना। (श्रीविद्या का सर्वाङ्गपूर्ण शास्त्रीय विवेचन)। डॉ. श्यामाकान्त द्विवेदी
शारदातिलक। 'पदार्थादर्श' संस्कृत टीका एवं डॉ. सुधाकर मालवीयकृत हिन्दी-टीका सहित।
षट्चक्रनिरूपण। पूर्णानन्दयति। शिवोक्त पादुकापञ्चक सहित। श्रीभारतभूषणकृत हिन्दी व्याख्या।
सप्तशतीसर्वस्व। (मूलमात्र) नानाविधसप्तशतीरहस्यसंग्रहः। पं. सरयू प्रसाद द्विवेदी
सर्वोल्लासतन्त्र। हिन्दी टीका सहित। टीकाकार - श्री एस. एन. खण्डेलवाल।
सार्द्ध-नवचण्डि-पुरश्चरण। डॉ. रामप्रिय पाण्डेय
सिद्धनागार्जुनतन्त्र। श्री एस. एन. खण्डेनवाल कृत हिन्दी टीका सहित।
सौन्दर्यलहरी। 'लक्ष्मीधरी' संस्कृत एवं 'सरला' हिन्दी व्याख्या। सुधाकर मालवीय
स्पन्दकारिका। विस्तृत हिन्दी व्याख्या, तुलनात्मक अध्ययन सहित। डॉ. श्यामकान्त द्विवेदी
स्वच्छन्दतन्त्र। संस्कृत-हिन्दी टीका सहित। प्रो. राधेश्याम चतुर्वेदी (1-2 भाग)

सिद्धसिद्धान्तपद्धति। हिन्दी अनुवाद सहित। स्वामी द्वारकादास शास्त्री।

पुस्तक-परिचय

वेद और आगम एक दूसरे के पूरक शास्त्र हैं। जिस प्रकार वेद के मन्त्र किसी की रचना नहीं है और उनको अपौरुषेय माना जाता है, उसी प्रकार आगम (तन्त्र) भी किसी मनुष्य की कृति नहीं हैं और अपौरुषेय हैं। अनादि काल से ही वैदिकी और आगमिक परम्परायें निर्बाधरूप से संसार में चली आ रही हैं। आगम के विषय में कहा गया है—

आगतं शिववक्त्रेभ्यः गतं तु गिरिजाश्रुतौ।
मतं तु वासुदेवेन तस्मादागम उच्यते।।

रावण-शिव के संवादरूप में **उड्डीशतन्त्र** प्रसिद्ध है। इसमें शान्ति, पुष्टि और वशीकरण आदि षट्कर्मों का वर्णन किया गया है। उड्डीशतन्त्र में निहित श्लोकों की व्याख्या इस प्रकार की गयी है कि श्लोकों का सम्पूर्ण और समुचित अर्थ प्रकाशित हो सके और पाठकों तथा साधकों को किसी भी प्रकार की क्लिष्टता का अनुभव न हो और वे सम्पूर्ण रहस्य को ज्ञात कर लेने के पश्चात् बताये गये प्रयोगों को सरलता से कर सकें तथा उनके अभिलषित मनोरथ पूर्ण हो सके।

इस पुस्तक के अन्त में परिशिष्ट भाग भी दिया गया है, जिसमें तान्त्रिकों के द्वारा प्रयुक्त और अनुभूत सिद्ध-मन्त्रों का प्रयोग और उनकी विधि बतायी गयी है। ये मन्त्र साधकों के मनोरथों को बिना किसी सन्देह के पूर्ण करने वाले हैं। परिशिष्ट भाग में दिये गये प्रयोगों को पूर्णतः समझ लेने के पश्चात् किसी योग्य गुरु के निर्देशन में करने पर पाठक-साधकों को निश्चित रूप से सफलता प्राप्त होगी, ऐसा विश्वास है।

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस
नई दिल्ली

email : chaukhambasurbharatiprakashan@gmail.com
website : www.chaukhamba.co.in

